हिंदी भूषण परीक्षा की सहायक पुस्तकें

रस और अलकार

(ले०—श्रीयुत रामबहोरी शुक्ल, एम ए, साहित्यरत्न
प्रोफेसर, क्वींस कालेज, बनारस)

इस पुस्तक में रस और अलकार का कठिन विषय बडी ही सरलता-पूर्वक समझाया गया है । प्रत्येक अलकार का लक्षण, उदाहरण तथा अलकारों के आपस के भेद समझाने में विद्वान् लेखक बहुत सफल हुए हैं । सभी उदाहरण आजकल की खडी बोली की कविता से दिए गए हैं, जिससे विद्यार्थी बडी आसानी से उन्हें समझ सकते हैं । इसको पढ कर हिन्दी-भूषण के विद्यार्थियों को और कोई पुस्तक पढने की आवश्यकता नहीं रहती । मूल्य |||=) मात्र ।

पिगल परिचय

(ले०—प० रामबहोरी शुक्ल, एम ए साहित्यरत्न, क्वींस कालेज, बनारस)

इसमें "अलकार प्रवेशिका' के सब छन्दों के लक्षण उसी छन्द मे देकर उसके उदाहरण खूब समझाकर दिये गये हैं, जिससे विद्यार्थी बहुत आसानी से छन्दशास्त्र को समझ सकते हैं । मू० |=)

हिंदी भवन, अनारकली, लाहौर

हिन्दी काव्य विवेचना

लेखक—
डा० इन्द्रनाथ मदन एम० ए० पी० एच० डी०
प्रोफेसर, दयालसिंह कालेज
लाहौर

दूसरा संस्करण | जून १९४० | मूल्य ।।।-)।।।

प्रकाशक—
श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार
विश्व-साहित्य ग्रन्थमाला
हस्पताल रोड, लाहौर

मुद्रक—
ला० रामभेजा कपूर
मालिक
लाहौर आर्ट प्रेस,
१६, अनारकली लाहौर।

तीन बातें

इस पुस्तक में पाठकों के लिये हिन्दी कविता का आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक का परिचय दिया गया है। ऐसा करने के लिये कविता को चार धाराओं में बांटा गया है। इनमें तीन-वीर, रहस्य और वैष्णव-धाराए तो हिन्दी कविता में पुरानी हैं। निराशा-भावों से भरी हुई कविता कुछ नवीन-सी है। इन चारों धाराओं के विकास का वर्णन करते हुए इनकी आलोचना सीधी और सरल भाषा में करने का यत्न किया है। परन्तु यह हिन्दी कविता का इतिहास नहीं है। कवियों और उनकी पुस्तकों के रचना काल पर कम ध्यान दिया गया है। प्रयास इस बात का किया है कि हिन्दी के रसिक अपनी कविता के विविध रूपों से परिचित होकर इसका अधिक रसास्वादन कर सकें। इन धाराओं के विकास का वर्णन करते हुए देश और काल का प्रभाव भी बताया है। आजकल समालोचना में इस बात पर अधिक ध्यान दिया जाता है कि कविता अथवा साहित्य को सामाजिक विकास की दृष्टि से देखा जाय। इस पुस्तक में तीन विशेष बातें हैं। सब से पहले हिन्दी कविता को कालों में विभक्त नहीं किया, परन्तु

धाराओं मे यह शैली पाठको को कविता का परिचय देने के लिये अधिक सुगम समझी गई है। दूसरे सामाजिक दशा का कविता और कवियों पर जो गहरा प्रभाव पडा, उसका वर्णन किया गया है। तीसरे कहने के ढग को सरल और मनोरञ्जक बनाने का पूरा यत्न किया गया है। नये पाठकों के लिये यह आवश्यक है। अन केवल वे ही न्याय कर सकते हैं कि यह प्रयास कहा तक सफल है।

३१ अगस्त १६३८ } इन्द्रनाथ मदन
मसूरी

दूसरी बार

यह पुस्तक दूसरी बार छप रही है। इसमे कुछ परिवर्तन किये गये हैं। भाषा को और भी माजा गया है, ताकि नये पाठकों के लिये रोचक बन सके। मुझे खुशी होगी अगर मेरी पुस्तक को पढने वाले अपनी कडी से कडी आलोचना से मुझे सूचित करेंगे। इस के लिये मैं उनका आभारी रहूगा।

३१ मई, १६४० } इन्द्रनाथ मदन
कृष्णनगर, लाहौर।

विषय-सूची

हिन्दी काव्य विवेचना

(१)

वीर कविता

वीर कविता का पहला युग

कविता सदा देश और काल के अनुसार बदलती रहती है। हिन्दी म सबसे पहला वीर-गाथा-काल है। इस काल की कविता वीररस प्रधान है। इसके विशेष कारण हैं। सबसे पहला कारण यह है कि भारत वर्ष कृषि-प्रधान देश रहा है। यहा पर साधारण लोगों का निर्वाह खेती-बाडी पर होता था। ये लोग पसीना बहाते थे, हल जोतते थे और कठिन परिश्रम करके रोटी कमाते थे। समाज में इनके सिवाय एक श्रेणी और भी थी जो इन लोगों की आडे समय में रक्षा करती थी। यह योद्धाओं की श्रेणी थी। उन्हें परिश्रम बहुत कम करना पडता था, जब कभी युद्ध होता था, केवल तभी उन्हें काम करने का अवसर मिलता था। अवकाश के समय ये लोग या इनके राजा कविता आदि से अपना मनोरजन किया करते थे। इनके लिये राजपूतो की सभाओं में चारण या भाट हुआ करते थे, ज कविता लिखकर अपने अन्नदाताओं का यश गान किया करते थे। ये लोग अपने स्वतत्र भावों को नहीं प्रकट कर सकते थे, परन्तु इनका काम यह था कि राजपूत राजाओं का यश वर्णन

करें, उनकी लडाइयों का विस्तार से उल्लेख करें। आजकल भी इस प्रकार के चारण भाट गावो मे भटकते फिरते मिलते हैं, मगर अब इन की श्रेणी धीरे-धीरे लुप्त हो रही है। क्योंकि इनके अन्नदाता भी नये समाजिक विधान के कारण लुप्त हो रहे हैं। इस प्रकार वीर-कविता के लिखे जाने का सबसे बडा कारण उस समय की सामाजिक बनावट है। कृषि-युग में वीर-कविता का होना एक आवश्यक बात थी।

राजनीतिक कारण

इस के साथ वीर कविता लिखे जाने के और भी कई कारण हैं। उस समय की राजनीतिक स्थिति बडी खराब थी। वह युग हलचल और अशान्ति का युग था। भारतवर्ष के सिन्ध आदि प्रान्तो पर अरब लोग पहले से ही आक्रमण कर चुके थे। धीरे-धीरे मुसलमान अपना प्रभाव देश के और प्रान्तों पर भी जमाने लगे। दिल्ली, मुलतान, अजमेर, लाहोर आदि नगरो पर मुसलमानों की विजय का झडा फहराने लगा। महमूद गजनवी ने भी इसी युग में भारतवर्ष पर सत्रह आक्रमण किये थे। और इन आक्रमणो में सोमनाथ के प्रसिद्ध मदिर को भी तोडा था। शाहबुद्दीन मुहम्मद गौरी ने भी इसी काल में हिन्दुस्तान पर विजय पाने का यत्न किया था। इस तरह बाहर से हमला करने वालो का एक ताँता-सा बँध गया। यहा के रहने वाले राजपूत राजाओं को आक्रमणकारियो से लोहा लेना पडा। इस परिस्थिति मे ऐसी कविता की आवश्यकता थी जो योद्धाओ और साधारण

मनुष्यों के हृदय में वीर-रस के भाव उत्पन्न कर सके और उनको शत्रुओं के साथ लड़ने को उत्साहित कर सके। वीर-कविता की उत्पत्ति और विकास का यह दूसरा कारण है।

सामाजिक कारण

राजनीतिक हलचल के इस युग में सामाजिक अवस्था भी बहुत बुरी थी। इन दिनों बौद्ध धर्म का पतन हो चुका था और वैदिक धर्म शक्तिशाली बन रहा था। देश इन दो दलोंमें बँटा हुआ था। जब से गुप्त साम्राज्य का अन्त हुआ था, तब से देश के अनेक छोटे-छोटे टुकड़े बन गये थे। सारे देश को एक तार में बाधने के लिये किसी ने सफल यत्न नहीं किया। धर्म के नाम पर कलह होते थे। रीति-रिवाज के नाम पर सिर फूट जाते थे। स्वयंवरों में राजपूत लोग अपने बल को प्रकट करना साधारण बात समझते थे कभी कभी तो अपना मन बहलाने के लिये अकारण युद्ध छेड़ देते थे। इस तरह विक्रम की नवीं, दसवीं और ग्यारवीं शताब्दियों में समाज की बड़ी शोचनीय दशा थी। इसको सुधारने के लिये वीररस की कविता की आवश्यकता थी।

अब देख लिया कि हिन्दी के आदि युग में जो वीर-रस की कविता मिलती है, इसके तीन प्रधान कारण ठहरे। सबसे पहले यह कृषि युग था और कृषि युग में राजा प्रधान था। राजा का यश-गान करना कवियों का धर्म था, दूसरा कारण यह है कि यह युद्धों का युग था। राजपूतों को बाहर से हमला करने वालों का सामना करना पड़ता था। मुकाबला करनेके लिये वीर-पुरुषोंकी आवश्यकता

करें, उनकी लडाइयों का विस्तार से उल्लेख करें। आजकल इस प्रकार के चारण भाट गावों में भटकते फिरते मिलते हैं, म धय इन की श्रेणी धीरे-धीरे लुप्त हो रही है। क्योंकि इनके अन्नदा भी नये समाजिक विधान के कारण लुप्त हो रहे हैं। इस प्रक वीर-कविता के लिखे जाने का सबसे बडा कारण उस समय सामाजिक बनावट है। कृषि-युग मे वीर-कविता का होना ए आवश्यक बात थी।

राजनीतिक कारण

इस के साथ वीर कविता लिखे जाने के और भी कई कार हैं। उस समय की राजनीतिक स्थिति बडी खराब थी यह युग हलचल और अशान्ति का युग था। भारतव के सिन्ध आदि प्रान्तों पर अरब लोग पहले से ही आक्रम कर चुके थे। धीरे-धीरे मुसलमान अपना प्रभाव देश के औ प्रान्तों पर भी जमाने लगे। दिल्ली, मुलतान, अजमेर, लाहौर आ नगरों पर मुसलमानों की विजय का झडा फहराने लगा। महमू गज्नवी ने भी इसी युग में भारतवर्ष पर सत्रह आक्रमण किये थे और इन आक्रमणों मे सोमनाथ के प्रसिद्ध मदिर को भी तोड था। शाहबुद्दीन मुहम्मद गौरी ने भी इसी काल मे हिन्दुस्तान प विजय पाने का यत्न किया था। इस तरह बाहर से हमला करने वालो का एक तांता-सा बँध गया। यहा के रहने वाले राजपूत राजाओं को आक्रमणकारियो से लोहा लेना पडा। इस परिस्थिति में ऐसी कविता की आवश्यकता थी जो योद्धाओं और साधारण

हुआ "पृथ्वीराजरासो" है। यह एक विशाल ग्रन्थ है। इसकी सबसे बड़ी उपयोगिता यह है कि यह उस समय की सामाजिक दशा का चित्र है। इसमें युद्धों की प्रधानता है। ये युद्ध राजा पृथ्वीराज ने लड़े थे। सब से प्रधान बात यह है कि "पृथ्वीराज रासो" में घटनाएँ एक दूसरे से कम सम्बन्ध रखती हैं। इनका तार बार-बार टूट जाता है। कहानी कहने का ढग या युद्धों का वर्णन ढीला पड जाता है। इस वीर-काव्य मे युद्धो के वर्णन के साथ साथ शृङ्गार रस का भी काफ़ी समावेश है। वीर और शृङ्गार रस साथ-साथ चलते हैं। यह होना आवश्यक भी है। वीर योद्धा जब सग्राम के बाद विश्राम करते हैं, तो उनकी रुचि शृङ्गार की ही ओर जाती है। यह सिद्ध बात है कि उनको लडने के लिए प्रेम की आवश्यकता होती है। रासो २५०० पृष्ठों का विशाल ग्रन्थ है। इनमे ७० के लगभग अध्याय हैं। यह हिंदी कविता का प्रथम महाकाव्य माना जाता है। वीर-गाथा युग की वह सब से महत्त्वपूर्ण रचना है। इसकी आज-कल जितनी भी प्रतियाँ मिलती हैं उनमे परस्पर आकाश-पाताल का अन्तर है। इसके रचयिता चन्द कवि महाराज पृथ्वीराज के समकालीन, उनके राजकवि और सखा माने जाते हैं। इसकी प्राचीनता के विषय में बड़ा विवाद है और ठीक तरह से नहीं कहा जा सकता कि इसकी रचना किस समय हुई।

वीसलदेव रासो

वीर-गीतों मे सब से प्रसिद्ध पुस्तक 'वीसलदेव रासो' है। इसमें फुटकर पद्यों की अधिकता है। अशान्ति व उस युग में लम्बी-लम्बी

थी और पुरुषो को वीर बनाने के लिये ऐसी कविता की आवश्यकता थी। तीसरे सामाजिक दशा इतनी शोचनीय थी कि उसको सुधारने के लिये वीर रस की कविता लिखी गई। जाति में फूट को दूर करना कवियो का अगर प्रधान आदर्श नहीं था, तो गौण तो अवश्य ही था। उनका प्रमुख आदर्श अपने राजाओंकी काल्पनिक गाथाओं को भी गाना था, जिससे राजा लोग अपने आश्रित कवियों या भाटों पर प्रसन्न रह सकें। यह वीर-रस की कविता का पहला रूप था। इस काल की कविता में राजा का यश प्रधान अङ्ग है और जाति का हित गौण अङ्ग है।

प्रथम युग की वीर कविता के रूप

इस समय की वीर-गाथा की कविता दो रूपों मे मिलती है—एक तो प्रबन्ध-काव्य के रूप में और दूसरे वीर-गीतो के रूप में। प्रबन्ध काव्य की सब से पहली रचना दलपति मिश्र का "खुमान-रासो" है। कहा जाता है कि इस मे चितौड के दूसरे खुमान के युद्ध का वर्णन है। ये युद्ध विक्रम की नवी और दसवीं शताब्दी मे हुए थे। इस समय इस पुस्तक की जो प्रतिया मिलती है, उनमें महाराणा प्रतापसिंह तक के युद्धों का वर्णन है। सम्भव है यह बाद की मिलावट हो। इसलिये निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि यह पुस्तक किन वर्षो में लिखी गई है। इसके रचना काल को निश्चित करने के लिये अभी खोज की आवश्यकता है।

पृथ्वीराज रासो

प्रबन्ध-काव्य की दूसरी प्रसिद्ध पुस्तक चन्द कवि का लिखा

समकालीन और कन्नौज के राजा जयचन्द का मित्र था। इस पुस्तक मे आल्हा और उदयसिंह नाम के क्षत्रियों के कारनामे फुटकर पद्यों में अंकित हैं। इसलिये इसको वीर-गीत के नाम से पुकारा जाता है। ये प्रबन्ध-काव्य और वीर-गीत वीर-कविता के पहिले उत्थान को सूचित करते हैं।

वीर कविता का दूसरा युग

इस काल के बाद देश का शासन मुसलमानो के हाथ में जाकर स्थिर हो गया। मुगल बादशाहों ने हलचल और अशान्ति के स्थान पर एक दृढ साम्राज्य स्थापित कर लिया। भारत-निवासियों ने इस बात को स्वीकार-सा कर लिया कि मुगल सम्राट् भारतवर्ष पर शासन करेंगे। उनके लिये एक बादशाह और दूसरे बादशाह में कोई भेद न रहा। यही बात महात्मा तुलसीदास ने मन्थरा के मुख से ' कोउ नृप होय हमें का हानी" कहला कर, उस समय के भावों को प्रकट किया था। लोग एक प्रकार से नींद की हालत में अपने आपको भूल गये। देश मुगल शासकों की कूट नीति में फँस कर अपनी स्थिति पर सन्तोष कर बैठा। अकबर, जहांगीर और शाहजहाँ का समय शान्ति का समय था। मेवाड़ की भूमि को छोड बाकी सब जगह शान्ति स्थापित हो चुकी थी। इसलिये वीर-कविता भी शांत होगई। तलवार की आवश्यकता नहीं रही। जनता ने भक्ति भावों की आवश्यकता अनुभव की। कविता राज दरबारों से निकल कर साधारण लोगों की चीज़ बनगई। यह दशा अधिक समय तक स्थिर न रह सकी। औरंगज़ेब के धार्मिक कट्टरपन ने दक्षिण

गाथाओं का लिखा जाना न तो बहुत सम्भव था और न स्वाभाविक। इसलिए अधिकतर वीर-गीतों का ही निर्माण हुआ। ये गीत वीर भावों को उभारने के लिए और योद्धाओं को वीर-गति की प्राप्ति के लिए ललचाने की दृष्टि से उपयोगी थे। इसके साथ-साथ राज सभाओं में सरदारों का गुण-गान करने के लिये भी काम में आते थे। "बीसलदेव रासो" का रचयिता नाल्ह नामक कवि था। यह अपने आश्रय-दाता बीसलदेव का समकालीन और राजकवि था। इस ग्रंथ में युद्ध आदि का वर्णन नहीं है, परन्तु इसमें जैसलमेर की राजकन्या राजमती से बीसलदेव के विवाह और विवाह के बाद अपनी स्त्री से रूठकर उड़ीसा चले जाने का वर्णन है। अनेक वर्षों के बाद राजमती के सन्देश भेजने पर उसके लौटने और लौटकर अपने कुटुम्बियों से मिलने का वर्णन है। वर्तमान समय में इसे एक प्रेम-गाथा भी माना जा सकता है। परन्तु इस में वीरों के सरल हृदय की व्यञ्जना होने से यह वीर-गीत ही कहलाता है।

आल्हखण्ड

आल्ह खण्ड वीर-गीतों की दूसरी पुस्तक है। अनेक लोग इसे पृथ्वीराज रासो का एक खण्ड ही मानते हैं। रायबहादुर श्यामसुन्दरदास का कहना है कि इसे एक स्वतन्त्र ग्रंथ मानना चाहिये। क्योंकि इस वीर-गीत में न तो महाराज पृथ्वीराज के चरित्र की प्रधानता है और न ही उसके वीर कामों की प्रशंसा है। आप के मतानुसार यह ग्रंथ पुराने रूप में जगनिक का लिखा हुआ था, जो परिमाल के दरबार में रहता था। परिमाल पृथ्वीराज का

समकालीन और कन्नौज के राजा जयचन्द का मित्र था। इस पुस्तक मे आल्हा और उदयसिंह नाम के क्षत्रियों के कारनामे फुटकर पद्यो में अंकित हैं। इसलिये इसको वीर-गीत के नाम से पुकारा जाता है। ये प्रबन्ध-काव्य और वीर-गीत वीर-कविता के पहिले उत्थान को सूचित करते हैं।

वीर कविता का दूसरा युग

इस काल के बाद देश का शासन मुसलमानों के हाथ मे जाकर स्थिर हो गया। मुगल बादशाहों ने हलचल और अशान्ति के स्थान पर एक दृढ साम्राज्य स्थापित कर लिया। भारत-निवासियों ने इस बात को स्वीकार-सा कर लिया कि मुगल सम्राट् भारतवर्ष पर शासन करेंगे। उनके लिये एक बादशाह और दूसरे बादशाह में कोई भेद न रहा। यही बात महात्मा तुलसीदास ने मन्थराके मुख से "कोउ नृप होय हमें का हानी" कहला कर, उस समय के भावों को प्रकट किया था। लोग एक प्रकार से नींद की हालत में अपने आपको भूल गये। देश मुगल शासकों की कूट-नीति में फँस कर अपनी स्थिति पर सन्तोष कर बैठा। अकबर, जहांगीर और शाहजहाँ का समय शान्ति का समय था। मेवाड की भूमि को छोड बाकी सब जगह शान्ति स्थापित हो चुकी थी। इसलिये वीर-कविता भी शांत होगई। तलवार की आवश्यकता नहीं रही। जनता ने भक्ति-भावों की आवश्यकता अनुभव की। कविता राज दरबारों से निकल कर साधारण लोगों की चीज़ बनगई। यह दशा अधिक समय तक स्थिर न रह सकी। औरगज़ेब के धार्मिक कट्टरपन ने दक्षिण

मे मरहठों की शक्ति को और पजाब मे सिक्खों की शक्ति को जगा दिया। तलवार का मुकाबला तलवार से होने लगा। छत्रपति शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह और छत्रसाल रणभूमि मे उतर आये। इस नई जागृति का मूल कारण धर्म-भावना थी। हिन्दी कविता मे फिर से वीर-भावों का सञ्चार होने लगा। यह वीर-कविता का दूसरा उत्थान था।

महाकवि भूषण

महाकवि भूषण इस काल के प्रतिनिधि कवि हैं। आप शिवाजी के राजकवि थे। आप की वाणी हिन्दू जाति की वाणी है। आप आरम्भ से ही वीर और तीखे स्वभाव के पुरुष थे। कहा जाता है कि युवावस्था में यह बिल्कुल निकम्मे थे। न यह कुछ करते थे, न ही कुछ कमाते थे। केवल खाना पीना ही जानते थे। इनके बड़े भाई चिन्तामणि राजकवि थे और इस बात का उनकी भावज को बड़ा गर्व था। एक दिन जब यह भोजन करने बैठे तो इन्होने अपनी भावज से नमक माँगा। वह इनके निठल्लेपन पर खीझ उठी और चिढ़कर उसने ताना दिया, "क्या नमक कमाकर भी लाते हो या केवल माँगना ही आता है?" भूषण का स्वभाव इतना तेज़ था कि आप उसी दम भोजन छोडकर घर से चल दिये।

सुनते हैं कि भूषण ने औरंगज़ेब के राजदरबार मे राजकवि पद के उम्मीदवार बनकर सम्राट् को कविता सुनने के लिए कहा। जब बादशाह ने स्वीकार कर लिया तो कहने लगे, "महाराज! अपने हाथ धो लीजिए।" इस बेतुकी बात को सुनकर औरंगज़ेब चकित

हो गया। उसने पूछा, "यह किस लिये ?" उत्तर मिला, 'यह इस लिए कि महाराज मेरी कविता सुनते सुनते अवश्य ही अपने हाथ अपनी मूछों पर ले जायेंगे और मालूम नहीं कि ये हाथ इस समय पवित्र हैं या नहीं ?" इस तरह भूषण को अपनी वीर-रस भरी कविता पर विश्वास था। एक और बात भी इनके जीवन में प्रसिद्ध है, जो इसी विश्वास को सूचित करती है। औरंगज़ेब से बिगड कर आप शिवाजी के पास रहने के लिए रवाना हुए। राजधानी में सायकाल को पहुँचे। थककर भवानी के मन्दिर की सीढ़ियों पर जा बैठ। एक भद्र पुरुष से भेंट हुई। उसने आने का कारण पूछा और कहा कि आप अपनी कविता सुनायें। इसके बाद वह शिवाजी से भेंट करा देंगे। भूषण ने कवित्त सुनाया और वह उस भद्रपुरुष को इतना पसन्द आया कि कवि को वह सत्रह बार दुहराना पडा। इस तरह आपकी कविता लोकप्रिय थी।

शिवाजी हिन्दू जाति का रक्षक था। भूषण कवि ने उनका यश-गान करके हिन्दू जाति को जागृत करना चाहा। आपका विचार था कि अगर शिवाजी न होते तो सब हिन्दुओं को इस्लाम स्वीकार करना पडता। उस समय मुसलमान देवालयों को तोड-तोड कर गिरा रहे थे। राव और राणा सब डर के मारे भाग रहे थे। स्वय पार्वती और गणेश औरंगजेब का प्रताप देखकर अपने-अपने स्थान में दुबक गये थे। काशी का प्रभाव नष्ट होगया था। मथुरा में मस्जिदें

बन गई थीं। साराश यह कि हिन्दू शक्तिया खतरे में थीं। उस समय—

> सजि चतुरग वीर रग मे तुरग चढि,
> सरजा सिवाजी जग जीतन चलत है।
> भूषन भनत नाद बिहद नगारन के,
> नदी-नद मद गैबरन के रलत है॥

शिवाजी और औरगज़ेब का खूब मुकाबला हुआ। मुग़ल बादशाह के हाथियों को शिवाजी के सिंह के समान वीर योद्धाओं ने फाड डाला—

> उतै पातसाहजू के गजन के ठट्ट छूटे,
> उमडि घुमडि मतवारे घन कारे हैं।
> इतै सिवराजजू के छूटे सिहराजऔ,
> विदारे कुम्भ करिन के चिक्करत भारे हैं॥

भूषण कवि औरगजेब के प्रति अपनी बडी घृणा प्रकट करते हैं। क्योंकि मुग़ल बादशाह ने "अपने सगे भाई दारा को आगरे के किले के चौक मे गढवा दिया। बूढ़े जीवित बाप को मरा मानकर उसका राज-छत्र छीन लिया और किले में बन्द कर दिया।" इस तरह आपकी कविता मुसलमानो क प्रति विरोध के भावों को प्रकट करती है। इसके विपरीत आप वीर शिवाजी की प्रशसा क पुल बाँधते हैं—"इन्हीं के भय के कारण मुग़ल घराने की बेगमें जो सुन्दर महलों मे रहती थीं वह अब भयानक पर्वतों में छिपी रहती हैं। जो पहले मिठाई

खाती थीं, वह अब गाजर मूली पर निर्वाह करती हैं। तीन बार भोजन करने वाली बेगमें अब केवल बेर खाकर ही गुज़ारा करती हैं।" वीर शिवाजी का आतंक चारों ओर छा गया है। औरंगज़ेब उसके मुक़ाबले में कुछ नहीं है।

अन्य वीर कवि

इस प्रकार भूषण की कविता में जातीय-भावना की पद-पद पर झलक है। वीर-गाथा काल के इस दूसरे उत्थान में हम शुद्ध वीर-रस की कविता पाते हैं। इस काल के तीन प्रमुख कवि हैं—भूषण, लाल और सूदन। भूषण ने "सिवराज भूषण," "शिवाबावनी" और "छत्रसाल" पुस्तकें लिखी हैं। इनमें से "सिवराज-भूषण" सब से बड़ा ग्रन्थ है। सूदन की कविता में वह जातीयता की फड़क नहीं है जो भूषण और लाल में है। इसके सिवाय सूदन ने जगह-जगह पर अस्त्र-शस्त्रों का वर्णन देकर कविता को नीरस बना दिया है। आपका "सुजान चरित्र" सूरजमल की वीरता का वर्णन करता है। इसमें वीर-रस तो भरा है, परन्तु वह जाति को उभारने के लिये कोई विशेष सहायता नहीं देता। कविवर लाल की कविता में सब गुण हैं और दोष कम हैं पर आपके छन्दों में नीरसता आजाती है। इन तीन प्रमुख कवियों के अतिरिक्त गुरु गोविन्दसिंह जहाँ पर वीर योद्धा थे वहाँ पर वीर-रस की कविता भी करते थे। आप सिक्खों के अन्तिम और दसवें गुरु थे। महावीर के रूप में आपने अपनी कविता में तलवार, युद्ध और वीर-पुरुषों का अच्छी

तरह यश गाया है। एक जगह आप लिखते हैं—

जिते वीर रुज्झ । तिते अन्न जुज्झ ॥
जिते खेत भाजे । तिते अन्त लाजे ॥
तुटे देह बर्म । छुटी हाथ चर्म ॥
कहूँ स्वेत खोल । गिरे सूर टोल ॥
कहूँ मुच्छ मुक्ख । कहूँ शस्त्र सक्ख ॥
कहूँ खोल खग्ग । कहूँ परम पग्ग ॥

इस प्रकार के वीर-भावों को जगाकर आपने हिन्दू जाति की रक्षा की और हिन्दी कविता की सेवा की। इन सब वीर कवियों की कविता मे एक प्रकार का खुरदरापन है। तलवार और युद्ध की कविता मे कोमल और मृदु भाव सम्भव नहीं होते।

वीर कविता का तीसरा युग

मुग़ल-शासन के अवसान के बाद अंग्रेज़ी राज्य की स्थापना होने लगी। अंग्रेज़ो ने अपनी शक्ति धीरे-धीरे बढ़ा ली जिससे हिन्दू समाज और भी चकित हो गया। अभी पहली पराधीनता को वह भूला ही नहीं था कि एक और प्रभावशाली जाति ने उस पर विजय पा लिया। अंग्रेज़ो और मुग़लों की विजय मे एक बड़ा भारी भेद है। जो काम मुसलमान तलवार से न ले सके, वही काम अंग्रेज़ो ने अपनी शिक्षा-प्रणाली से लिया। धीरे-धीरे लोग अपने पूर्वजों को घृणा की दृष्टि से देखने लगे। यह हिन्दू-संस्कृति की पराजय थी जो कि तलवार की पराजय से गहरी बन पड़ी। औरंगज़ेब के काल में अगर मन्दिर और

मूर्तियाँ तोडी गई तो अंग्रेजी शासन-काल में इनकी आवश्यकता ही नहीं रही। अब ऐसे कवियों की जरूरत हुई जो इस मिटती हुई हिन्दू-सस्कृति का फिर से उद्धार कर सके।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

सब से पहले भारतेन्दु हरिश्चन्द्र न इस काम को अपने हाथ में लिया। आपने कवि के और जाति-सुधारक के रूप में देश की दशा को ठीक करने का भरसक यत्न किया। इस समय पुराने और नये विचारों में सघर्ष हो रहा था। दोनों दलो के लोग अपनी-अपनी हठ पर अड़े थ। एक पक्ष दूसरे को नास्तिक, क्रिस्तान और भ्रष्ट कहा रहा था तो दूसरा उन्हें अन्ध-विश्वासी की पदवी दे रहा था। भारतेन्दु ने दोनो के मिलाने के लिये उपदेश दिया। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों के विरोध मे लेख और कवितायें लिखी, विधवा विवाह, समुद्र यात्रा आदि के पक्ष मे लिखा। लडकियो की शिक्षा के लिये आपने उद्योग किया। यहा तक की परीक्षा में पास होने वाली लडकियों को उत्साह देने के लिये वह उन्हें बनारसी साडिया पुरस्कार में देते थे। राष्ट्र को एक सूत्र मे बाँधने के लिये हरिश्चन्द्रजी ने हिन्दीको राष्ट्र-भाषा बनाना चाहा। इसके लिये उन्होंने खूब आँसू बहाये। लोगों को जगाने के लिये सन्देश दिया और लिखा—

जागो जागो रे भाई।
सोवत निसि बसै गँवाई। जागो जागो रे भाई॥
निशि को कौन कहे दिन बीत्यो काल रावि चल आई॥

देख परत नहिं हित अनहित कछु परे वैरि बस आई ॥
निज उद्धार पन्थ नहिं सूझत सीस धुनत पछताई ॥

इस तरह पुरानी वीर रस की कविता अपनी तलवारों की झनकार और युद्ध के कोलाहल को छोड़कर आँसुओं में परिणत हो गई। कवि ने देश के पुराने गौरव को जगाने का यत्न किया, क्योंकि देश की परिस्थिति ऐसी ही थी। लोग हिन्दू सभ्यता से मुँह मोड़ रहे थे। इससे कुछ समय पहले स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भी वैदिक-सभ्यता को पुनर्जीवित करने के लिये आर्य समाज की स्थापना की थी। बगाल में राजा राममोहनराय ने इसी काम को हाथ में लेकर ब्रह्म-समाज को चलाया। अनेक समाज-सुधारक कर्म-क्षेत्र में आर्य सभ्यता को बचाने के लिये आ उतरे। इन लोगों का सदेश केवल हिन्दू समाज तक परिमित था। इस लिये भारतेन्दु की कविता में मुसलमानो के प्रति वही विरोध के भाव मिलते हैं जो भूषण आदि कवियों ने अपनी कविता में प्रकट किये थे। धीरे २ इस प्रकार के भाव आगे आने वाली राष्ट्रीय कविता से लुप्त हो गये। भारतेन्दु-युग की वीर-कविता का सन्देश बिखरे हुए हिन्दू जाति के लोगों को मिलाना है और पुराने गौरव को जगाना है।

राय देवी प्रसाद "पूर्ण"

राय देवी प्रसाद "पूर्ण" ने अपनी "भारत-वाक्य" नामक कविता में इन्हीं भावो को प्रकट किया है—

लक्ष्मी दीजै लोक में मान दीजै,
विद्या दीजै सभ्य सन्तान दीजै।
हे हे स्वामी प्रार्थना कान कीजै,
कीजै कीजै देश कल्याण कीजै।
सुमति सुखद दीजै फूट को लोग त्यागैं।
कुमति हरन कीजै द्वेष के भाव भागैं॥
तजि कुसमय निद्रा चित्त सो चित्त जागैं।
विषम कुपथ त्यागै नीति के पन्थ लागै॥

इस प्रकार के पद जो "स्फुट" नाम की कविता मे मिलते हैं, काव्य की दृष्टि से सुन्दर नहीं हैं, क्योंकि इन मे उपदेश की मात्रा अधिक और स्पष्ट है। फिर भी यह उस समय की वीर-कविता की धारा को निर्दिष्ट करते हैं और बताते हैं कि वह धारा तब किस ओर बह रही थी। इसी तरह कवि श्रीधर पाठक "भारत सुत" कविता में छात्रो को देश-सेवा के लिये आमंत्रित करते हैं। आप कहते हैं कि नवयुवक ही देश की आशा हैं।

श्री मैथिलीशरण गुप्त

प्राचीन गौरव को जगाने वाले प्रमुख कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त हैं। हिन्दी कविता मे आपने एक युगान्तर-सा पैदा कर दिया है। जब समाज अपने पुराने आदर्शों को भूल रहा था तो आपने "भारत भारती" पुस्तक लिख कर उन आदर्शों को फिर से जगाने का सफल यत्न किया। यह पुस्तक हिन्दी कविता में अपना विशेष स्थान रखती है। इसके तीन खण्ड हैं—पहले

खण्ड मे भारतवर्ष के अतीत गौरव का वर्णन किया है और बतलाया है कि पूर्वजों ने कविता, नाटक, कला, विज्ञान और धर्म आदि में कितनी उन्नति की थी। भूतकाल एक तरह का स्वर्ण-युग था। दूसरे खण्ड मे आधुनिक शोचनीय दशा का वर्णन किया है। देश की गरीबी, बीमारी, अविद्या का करुण चित्र खींचा है। तीसरे खण्ड में कवि ने उस सुनहले भविष्य का वर्णन किया है, जिसके लिये जाति को भरसक यत्न करना चाहिये। प्रचार की दृष्टि से पुस्तक अधिक सफल रही है। यहाँ तक कि इसके अनेक संस्करण छप चुके हैं। कविता की दृष्टि से आधुनिक पाठक को वह इतनी सुन्दर नहीं जान पड़ती। 'स्वदेश संगीत" आपकी राष्ट्रीय कविताओं का संग्रह है। इस पुस्तक में कवि जातीय भावो को लाँघ कर देश और राष्ट्र के गीत गाता है। 'मेरा देश', 'भारत का झंडा', 'भारत की जय' आदि मे वह इन्हीं भावों को प्रकट करते हैं। "आह्वान" में वह लिखते हैं —

घन अन्धकार में ज्योति जगा जा, आ जा,
भूले भटकों को पार लगा जा, आ जा।
निज प्रेम-पुण्य में हम पगा जा, आ जा,
मरने तक का भय दूर भगा जा, आ जा।
सब साम्य भाव से रहें रङ्क क्या राजा।
आ जा, आ जा, ओ महाशक्ति, माँ, आ जा?

इस तरह के राष्ट्रीय भाव गुप्त जी की कविता मे कहीं-कहीं

मिलते हैं। अधिकतर आपने हिन्दू समाज और संस्कृति को जगा-ने का सङ्कल्प किया है। यह आदर्श आपके लगभग सभी ग्रन्थों में मिलता है। "वैतालिक", "हिन्दू", "गुरुकुल" और "अनघ" इन चारों ग्रन्थों का क्षेत्र हिन्दू समाज तक ही सीमित है। "साकेत" आपका महाकाव्य है। इसमें भी "रामायण" या "रामचरित मानस" की कथा को लेकर नवीन ढंग से समाज के आदर्श को खड़ी बोली में पेश किया है। इस तरह भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी कविता में जो युगान्तर उपस्थित किया, उसी के फलस्वरूप खड़ी बोली का प्रचार हुआ। देश को ऐसी भाषा की आवश्यकता थी जिसे बहुत से प्रान्तों के लोग समझ सकें। भारतेन्दु से पहले कविता प्राय ब्रजभाषा और अवधी में लिखी जाती थी। मगर आम लोगों की वह भाषा न रही। इनका स्थान खड़ी बोली ने ले लिया। इस क्षेत्र में गुप्त जी सर्वप्रिय कवि हैं। खड़ी बोली के काव्य की प्रगति को आप से बड़ी सहायता मिली है। आप जैसे कवियों के खड़ी बोली में आ जाने से नवीन कवियों को इस भाषा में लिखने का काफ़ी उत्साह मिला है। महाकवि गुप्त का हिन्दी कविता में अमर स्थान है। एक तो आपने फिर से समाज की मर्यादा को स्थापन करने का यत्न किया है। यह मर्यादा अंग्रेजी सभ्यता के आने से अस्तव्यस्त हो रही थी। बिखरे हुए आदर्शों को एक स्थान पर संगठित किया है और इनका अनुसरण करने के लिए लोगों को सन्देश दिया है। दूसरे खड़ी बोली को स्थिर रूप देकर इसको कविता की भाषा के योग्य बनाया है।

वीर कविता का चौथा युग

धीरे-धीरे देश की परिस्थिति बदलती गई और लोग अनुभव करने लगे कि भारतवर्ष में केवल हिन्दू ही नहीं बसते, परतु मुसलमान भी निवास करते हैं। उनके प्रति विरोध का भाव तो गुप्त जी की कविता मे मिट गया था। इसके बाद वीर-रस की कविता ने एक और मार्ग पकड़ा। यह कविता केवल हिंदू जाति के हित के लिये नहीं थी, परतु सारे देश के हित के लिये थी। राष्ट्र का विकास इतना हो गया था कि जाति-हित को देश-हित के लिये बलिदान करना पड़ा। नई प्रकार की जो कविता लिखी जाने लगीं, उस पर गाधीजी और कांग्रेसके आदर्शों का गहरा प्रभाव पडा। इसमे उपदेश कम था और अनुभूति अधिक थी। कानपुर के राष्ट्रीयपत्र 'प्रताप' ने नवीन कवियो को विशेष उत्साह दिया। इस पत्र ने राष्ट्रीय रग में रंगी हुई रचनाओ को प्रकाशित किया। इस प्रकार की कविता लिखने वालों में श्री माखनलाल चतुर्वेदी, श्री सियारामशरण गुप्त, श्री बालकृष्ण शर्मा "नवीन", श्री"हितैपी" और श्री"सनेही" आदि कवियों के नाम आते हैं। इनकी कविताओ में राष्ट्रीय विचारों की प्रधानता अवश्य रही है।

श्री माखनलाल चतुर्वेदी

श्री माखनलाल चतुर्वेदी कविता मे अपना नाम "एक भारतीय आत्मा" रखते हैं। वे सचमुच एक भारतीय आत्मा है, जिनकी कविता में राष्ट्रीय भावो की एक विशेष झलक मिलती है। इनकी वीर-कविता पुरानी वीर-कवितासे अलग और अनोखी है। आपके

लिये वीर वह है जो शत्रुओं को नाश करने के लिये अपने जीवन का बलिदान कर सके। शत्रु पर विजय पाने के लिये अपना बलिदान करना आवश्यक है। उसका मारना पाप है। यह आधुनिक गान्धीयुग का सन्देश है। महात्मा गाधी ने अहिंसा के आदर्श के अनुसार लोगों के दिल में नये वीरता के भाव भर दिये हैं। इन विचारों का चतुर्वेदी जी की कविता पर काफ़ी प्रभाव पडा है। आपकी कविता में देश की गरीबी और उसकी उलझनों का प्रबल उद्वेग है। एक कर्म-परायण कवि होते हुए आपने लोगों को कर्म पर बलिदान होने का सन्देह दिया है। एक फूल की अभिलाषा का वर्णन करते हुए आप कहते हैं —

चाह नहीं, मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ।
चाह नहीं, प्रेमी-माला में बिंध प्यारी को ललचाऊँ ॥
चाह नहीं, सम्राटों के शव पर हे हरि डाला जाऊँ,
चाह नहीं, देवों के सिर पर चढ़ूँ, भाग्य पर इठलाऊँ।
मुझे तोड लेना बनमाली! उस पथ में देना तुम फेंक,
मातृभूमि पर शीश चढाने! जिस पथ जावें वीर अनेक।

इस कविता में विशेषता केवल यही है कि कवि ने साधारण-सी बात को आधुनिक रंग में रँग कर अनोखा बना दिया है। वीरता के भावों को संकेत रूप से प्रकट किया है। इनमें एक नई तरह की मौलिकता और भावुकता है। किस तरह कवि ने मातृभूमि पर शीश चढाने वाले वीर लोगों का मान किया है। ये लोग आज कल के देवता हैं, ऐसा कवि का मत है। इसी तरह "सिपाही"

कविता को पढकर हृदय बाँसों उछल पडता है। शरीर में वीर-रस का सञ्चार होता है, "बलिदान" में कर्म के आदर्श की प्रशसा की है। "आराधना" में यही भाव प्रकट किये गये हैं। कहते हैं—

'लो, सुनो—'सफलता' आ रही
है किन्तु मृत्यु के साथ है।
बस, उठो कर्म करने लगो,
जीत तुम्हारे हाथ है।

आपकी अधिकाश कवितायें राष्ट्रीय भावों से ओतप्रोत हैं। इस प्रकार की रचनायें "प्रभा", 'प्रताप' और 'कर्मवीर' आदि पत्रों में प्रकाशित होती रही हैं, जिनके कारण आप नवीन युग के प्रतिनिधि कवियो में माने गये हैं।

श्री सियाराम शरण गुप्त

श्री सियारामशरण गुप्त की कवितायें भी राष्ट्रीय भावों से लबालब भरी हुई हैं। जिस समय देश मे वीर-रस का स्रोत बह रहा हो, कवि भी उसके साथ बहते हैं। गान्धी-युग में कवि समुदाय भारत को जगाने मे लगा हुआ था। इस समय श्री मैथिली शरण जैसे कवि अतीत गौरवका गुण-गान गा रहे थे और वर्तमान अधोगति का एक करुण चित्र खींच रहे थे और भविष्य को सुनहला बनाने का उपदेश दे रहे थे। उसी समय उनके भाई श्री सियारामशरण गुप्त ने 'मौर्य विजय" वीर-रस प्रधान काव्य की रचना की। इसमें चन्द्रगुप्त मौर्य और यूनानी सेनापति सेल्यूकस के युद्ध का वर्णन है। कहानी बडी छोटी-सी है, परन्तु

इसके आधार पर कवि ने अपने वीर-भावों की धारा को प्रवाहित किया है। ये छलकते हुए भाव हृदय को उत्साह देते हैं और उत्तेजित करते हैं। कवि का "अनाथ" नामक छोटा-सा काव्य करुणा रस के भावों से भरपूर है। इसमें एक दरिद्र और अनाथ बालक के जीवन का वर्णन है। यह बालक भारत की ग़रीबी को प्रमाणित करता है। इस प्रकार की रचनाओं में "आत्मोत्सर्ग" आपकी प्रधान रचना है। यह काव्य स्वर्गीय गणेशशंकर विद्यार्थी की याद में लिखा गया था। स्वर्गीय गणेशशंकर उन महापुरुषों में से थे, जिन्होंने सेवा-भाव से प्रेरित होकर अपना जीवन बलिदान कर दिया था। जब इन का देहान्त हुआ था तो महात्मा गान्धी ने आपके सम्बन्ध में लिखा था—"आज वह तब से कहीं अधिक सच्चे रूप में जीवित हैं।" "एक फूल की चाह" में अछूतों के मन्दिर प्रवेश विषय को लेकर आपने एक भाव-पूर्ण कहानी लिखी है। कवि की राष्ट्रीय रचनायें अधिकतर कहानियों के आधार पर लिखी गई हैं। इनमें वर्णन की मात्रा अधिक है। भावों की कम। श्री माखनलाल की कविता में इसके विपरीत भावों की मार्मिकता अधिक है।

श्री बालकृष्ण शर्मा "नवीन"

श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की कविताओं में वीरता के भाव छलक-छलक कर बाहिर आते हैं, उनमें एक अनोखी मादकता है, उन्माद है और पीडा है। आप हलचल, उथलपुथल और क्रान्ति के पुजारी हैं। आपकी कामना है कि इस ससार को

तोड़फोड कर अपने हृदय के अनुसार एक नया ससार बनाया जाय। यह भाव तो हर एक कवि के मन में उठते हैं। वे चाहते हैं कि इस नीरस, निर्जीव ससार के स्थान पर एक ऐसे ससार की रचना होनी चाहिए, जिसमे सुख हो, प्रेम हो, अथवा जीवन हो, वे ऐसा ससार कविता में बनाने का यत्न भी करते हैं, मगर वह क्षण-भगुर होता है। श्री "नवीन" अपनी प्रसिद्ध "विप्लव-गायन" कविता में इस ससार को मिटाने की एक तीव्र और भीषण कल्पना करते हैं। आप चाहते हैं कि इस छल और कपट से भरी हुई दुनिया का नाश हो जाय। आप इसके सब नियम और बन्धन तोड डालना चाहते हैं। इस मतवालेपन में आप यहाँ तक ही नहीं रुकते। केवल इस ससार का प्रलय ही नहीं चाहते, बल्कि आकाश का प्रलय भी चाहते हैं। तारों के टूक-टूक हो जाने, आकाश का वक्षस्थल फट जाने, माता के अमृतमय दूध के कालकूट हो जाने, आँसों का पानी शोणित की बूँद हो जाने और आकाश मे प्रलय की गर्जन पैदा होने की आप क्रान्तिकारी कल्पना करते हैं। बस, इस कविता का यही प्रधान गुण है। आप लिखते हैं —

कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ—
जिससे उथल-पुथल मच जाए।

एक हिलोर इधर से आए—एक हिलोर उधर आए,
प्रणो के लाले पड जाएँ, त्राहि-त्राहि रव नभ में छाए,
नाश और सत्यानाशो का, धुआँधार जग मे छा जाए,

बरसे आग, जलद जल जाए, भस्मसात् भूधर हो जाएँ,
नभ का वक्षस्थल फट जाए, तारे टूक-टूक हो जाएँ,
कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ—
जिससे उथल-पुथल मच जाए।

इस प्रकार का भीषण वेग, हृदय की धड़कन, स्वाधीनता और जीवन की जागृति आपके 'पराजयगीत' में भी है। उथल-पुथल आपके जीवन का आदर्श है, इसको बार-बार अपनी कविता में प्रकट करते हैं।

श्री रामनरेश त्रिपाठी

श्री रामनरेश त्रिपाठी भी राष्ट्रीय स्कूल के प्रमुख कवियों में से हैं। आप पर महात्मा गांधी के अहिंसावाद का विशेष प्रभाव पड़ा है। आप की कविताओं में कथाओं के रूप में इस आदर्श को भली प्रकार दिखाया गया है।

"मिलन" में कथा इस प्रकार है—एक नवयुवक और नवयुवती अपने देश की स्वाधीनता के लिये लड़े। नवयुवक के पिता जाते समय अपने पुत्र के नाम बलिदान का सन्देश छोड़ गये। वह स्वयं सरकारी अन्याय से दुखी थे। संयोगवश नवयुवक और नवयुवती को एक दूसरे से अलग होना पड़ा। एक बार एक साधु ने उनको नदी में डूबने से बचाया। साधु ने नवयुवक को देश की सेवा करने के लिये सन्देश दिया। नवयुवती भी एक गरीब किसान की करुण दशा से प्रेरित होकर देश-सेवा में लग गई। उसने अनुभव किया कि देश-सेवा ही जीवन को शान्ति दे सकती

है। इन दोनों ने अन्यायों के साथ युद्ध किया और लोगों का भला किया। इस तरह कवि ने कहानी के रूप में देश-सेवा के आदर्श को अपनाया है।

इसी तरह "पथिक" में कवि ने सेवा और प्रेम में संघर्ष दिखाने का यत्न किया है। एक तरफ़ सेवा है और दूसरी तरफ़ प्रेम है। दोनों में संग्राम बराबर जारी है। सेवा की प्रेम पर विजय होती है। आपका विचार है कि जीवन का आदर्श सेवा ही हो सकता है। प्रेम का स्थान इसके नीचे है। "पथिक" की कहानी में नायक देहात में चक्कर लगाता है और अनुभव करता है कि किसानों में असीम ग़रीबी है और भूख है। इसके लिये राज्य अपराधी है। कुछ समय के बाद नायक को असन्तोष फैलाने के अपराध में पकड़ लिया जाता है और उसे प्राणदण्ड दिया जाता है। जब उसकी पत्नी को पता लगता है तो वह वहाँ पर पहुँच जाती है। वह विष का प्याला, जो उसके पति को दिया जाना था, स्वयं पी जाती है। लोग स्त्री के बलिदान पर चकित हो जाते हैं। राजा के अधिकारी तब नायक के पुत्र के वध के लिये आज्ञा देते हैं, मगर नायक शान्त है। वह सच्चा सत्याग्रही है, महात्मा गान्धी का पूरा भक्त है।

इसी तरह "स्वप्न" में श्री त्रिपाठी ने इसी देश-सेवा के आदर्श को कथा के रूप में विकसित किया है। विषय वही पुराना है। एक तरफ प्रेम है। दूसरी तरफ सेवा। मालूम पड़ता है यह कवि के अपने जीवन की समस्या है। कथा नायक पारिवारिक सुखों

में लिप्त है। एक दिन उसको ज्ञान होता है कि उसको देश की सेवा करनी चाहिये, झिझकने के बाद वह यही निश्चय करता है। देश पर शत्रुओं का हमला होता है और लोग इस को रोकने के लिये फौज में भरती होते हैं। माताये अपने बच्चो को रण में जाने के लिये प्रेरित करती हैं और कहती हैं—

मॉं ने कहा—दूध की मेरे
लज्जा रखना रण में हे सुत!

× × ×

इन वचनो से गूँज रहे थे
जिनके श्रवण अन्तस्तल
ग्राम ग्राम से निकल-निकल कर
ऐसे युवक चले दल के दल.

और

बहिने कहती थीं—हे भाई!
वैरी का अभिमान चूर्ण कर
विजयी योद्धा व बानक मे
इसी राह होकर आना पर
हम गायेगी गीत विजय के
फूल और लाजा बरसा कर
बहनो को आनन्दित करना
हर्ष हमारा सुना सुना कर

है। इन दोनो ने अन्यायों के साथ युद्ध किया और लोगों का भला किया। इस तरह कवि ने कहानी के रूप में देश-सेवा के आदर्श को अपनाया है।

इसी तरह "पथिक" में कवि ने सेवा और प्रेम में संघर्ष दिखाने का यत्न किया है। एक तरफ़ सेवा है और दूसरी तरफ़ प्रेम है। दोनो में संग्राम बराबर जारी है। सेवा की प्रेम पर विजय होती है। आपका विचार है कि जीवन का आदर्श सेवा ही हो सकता है। प्रेम का स्थान इसके नीचे है। "पथिक" की कहानी मे नायक देहात में चक्कर लगाता है और अनुभव करता है कि किसानों में असीम ग़रीबी है और भूख है। इसके लिये राज्य अपराधी है। कुछ समय के बाद नायक को असन्तोष फैलाने के अपराध में पकड़ लिया जाता है और उसे प्राणदण्ड दिया जाता है। जब उसकी पत्नी को पता लगता है तो वह वहाँ पर पहुँच जाती है। वह विप का प्याला, जो उसके पति को दिया जाना था, स्वयं पी जाती है। लोग स्त्री के बलिदान पर चकित हो जाते हैं। राजा के अधिकारी तब नायक के पुत्र के वध के लिये आज्ञा देते हैं, मगर नायक शान्त है। वह सच्चा सत्याग्रही है, महात्मा गान्धी का पूरा भक्त है।

इसी तरह "स्वप्न" में श्री त्रिपाठी ने इसी देश-सेवा के आदर्श को कथा के रूप में विकसित किया है। विषय वही पुराना है। एक तरफ प्रेम है। दूसरी तरफ सेवा। मालूम पड़ता है यह कवि के अपने जीवन की समस्या है। कथा नायक पारिवारिक सुखों

में लिप्त है। एक दिन उसको ज्ञान होता है कि उसको देश की सेवा करनी चाहिये, झिझकने के बाद वह यही निश्चय करता है। देश पर शत्रुओं का हमला होता है और लोग इस को रोकने के लिये फौज में भरती होते हैं। मातायें अपने बच्चों को रण में जाने के लिये प्रेरित करती हैं और कहती हैं—

माँ ने कहा—दूध की मेरे
लज्जा रखना रण में हे सुत !

× × ×

इन वचनों से गूँज रहे थे
जिनके श्रवण अन्तस्तल
ग्राम ग्राम से निकल-निकल कर
ऐसे युवक चले दल के दल

और

बहिनें कहती थीं—हे भाई !
वैरी का अभिमान चूर्ण कर
विजयी योद्धा के बानक में
इसी राह होकर जाना पर
हम गायेंगी गीत विजय के
फूल और लाजा बरसा कर
बहनों को आनन्दित करना
हर्ष हमारा सुना सुना कर

इन भावो से प्रेरित होकर नायक की पत्नी आदर की पोशाक पहन कर अपने पति को समाम मे सम्मिलित होने के लिये उद्बोधित करती है। उसके पति की विजय होती है और इस बात का पीछे पता चलता है कि "नवयुवक" उसकी पत्नी ही थी। इन तीनो काव्यों मे कवि ने महात्मा गान्धी के असहयोग आन्दोलन की झलक दिखाई है। यह वीर-कविता की अन्तिम मञ्जिल है। वीर कविता की धारा चन्द युग, भूषण-युग, भारतेन्दु युग, गुप्त-युग, और गान्धी-युग से बहती हुई यहा पर आकर विश्राम करती है। इससे आगे इसका क्या रूप होगा, अभी ठीक निश्चित नहीं हो सकता। कुछ फुटकर कवितायें जो आज कल लिखी जा रही हैं, साम्यवाद के विचारों को प्रकट करती है। उनका विषय देहात है, किसानो की ग़रीबी है, उनकी भूख और तड़प है और अमीरो का विलासपूर्ण जीवन है।

---

(२)

रहस्यवाद

सामाजिक स्थिति

जब मुसलमानों ने इस देश में स्थिर रूप से अपने पाँव जमा लिये, तब इनके फकीर जनता में इस्लाम धर्म का प्रचार करने लगे। उनका विचार था कि हिन्दू जाति छोटे छोटे टुकड़ों में बँटी हुई है। लोग अलग-अलग देवी देवताओं की पूजा करते हैं। समाज में छोटी जाति के लोगों को घृणा की दृष्टि से देखा जाता है। इसलिये वह अपने धर्म का सुगमता से प्रचार कर सकेंगे। मुसलमान एक ईश्वर को मानते थे। उनके समाज में ऊँच-नीच का कोई भाव नहीं था। वे जाति-भेद से मुक्त थे। धीरे-धीरे इन बातों का प्रभाव हिन्दू समाज पर पड़ने लगा। इससे पहले शंकराचार्य ने अपने मायावाद को फैलाने का भरसक यत्न किया। इनका मायावाद जो इस संसार को माया बतला कर एक ब्रह्म की सत्ता ही मानता था, आम लोगों के लिये नीरस साबित हुआ। साधारण लोग इतनी गहरी ज्ञान की बातों को नहीं समझ सकते थे। उनको ऐसे विश्वासों की या मत की आवश्यकता थी जो उनके लिये सुगम और सरल हो। इसलिये शंकर का मायावाद मुसलमान फकीरों के प्रचार को रोकने के लिये काफ़ी न था।

निराकार उपासना

शंकर के विचारों को रामानन्द ने सुगम रूप दिया।

राम को निराकार ब्रह्म का रूप देकर उपासना का आदर्श बनाया और लोगो के दिलों में इस निराकार ईश्वर की भक्ति के लिये भाव पैदा किये। सारे देश में घूमकर रामानन्द ने लोगो को यह बताने का यत्न किया कि राम की आखों में सब लोग बराबर हैं, उसके दरबार में कोई जाति-भेद नहीं। वह लोग जो जीवन से निराश होते जाते थे, इन भावों को पाकर फिर से एक नई जीवन-शक्ति का अनुभव करने लगे। रामानन्द का आन्दोलन मुसलमान सूफ़ियों के प्रचार को रोकने के लिये सफल रहा। अगर वह एक ईश्वर का प्रचार करते थे, तो राम भी ब्रह्म का एक निराकार रूप थे। अगर इस्लाम में कोई जाति-भेद नहीं था, तो राम के लिये भी सब बराबर थे। अगर देवी-देवता सोमनाथ के मन्दिर तोडे जाने पर पुजारियों की सहायता न कर सके थे, तो शक्तिशाली राम लोगों का आश्रय बन गए। देश की इस परिस्थिति मे निर्गुणवाद का आरम्भ हुआ।

इस निराकार राम के प्रति उपासना करने वालो में से कबीर प्रमुख सन्त कवि थे। कहा जाता है कि आपका जन्म एक जुलाहे के घर हुआ था। जुलाहे नीच जाति के समझे जाते थे। परन्तु रामानन्द के आन्दोलन से हरेक के लिये भक्ति मार्ग खुल गया। इनके शिष्यो में से नामदेव दर्जी, रैदास चमार दादू दयाल धुनियाँ और कबीर जुलाहा थे। स्त्रियों की पदवी भी स्त्री होने के कारण नीच न रही। पुरुषों के समान वे भी भक्ति की अधिकारिणी बन गई। रामानन्द के शिष्यों में

से दो स्त्रिया भी थीं। एक पद्मावती और दूसरी सुरसरी। इस तरह देश में एक नये जीवन का सचार होने लगा। कबीर के पीछे सन्तो की एक बाढ सी आ गई। जिन्होंने अनेक मत चलाये। इन सब पर थोडा बहुत कबीर का प्रभाव पडा। सब सन्तों ने नाम, शब्द, गुरु आदि की महिमा गाई। मूर्ति पूजा आदि का विरोध किया, जाति-पाँति के भेद भाव हटाने का प्रयत्न किया।

रहस्यवाद का मूल

इन सन्त कवियो की उपासना निराकार उपासना थी। इन की वाणी मे अपने उपासक के प्रति जो सकेत मिलते हैं, वे केवल आभास के रूप मे मिलते हैं। वे बिल्कुल स्पष्ट नहीं हैं। उनके अगोचर और अस्पष्ट होने के कारण वे रहस्यमय प्रतीत होते हैं, इसलिये उनकी कविता रहस्य सी बन जाती है और इस कविता की धारा को रहस्यवाद कहते हैं। इसके मूल में एक अज्ञात शक्ति की जिज्ञासा काम करती है। कवि अनुभव करता है कि इस ससार को चलाने वाली एक शक्ति है। इस शक्ति का क्या स्वभाव है, क्या प्रकृति है, इसका कभी-कभी वह अनुभव तो कर लेता है, परन्तु स्पष्ट वर्णन नहीं कर सकता। इसलिये अपनी कविता में वह इस शक्ति को सकेत या इशारे से प्रकट करता है। कबीर ने एक जगह स्पष्ट कहा है कि इस शक्ति का अनुभव उस गुड की मिठास के समान है, जिस को गूँगा वर्णन नहीं कर सकता। यही रहस्यवाद का मूल है। इसी को कबीर अपनी वाणी में बार-बार वर्णन करता है—

नाम रटा तो क्या हुआ जो अतर है हेत।
पति वरता पति को भजै मुख से नाम न लेत॥

इस तरह के सीधे और गहरे रहस्य भावों को अपनी अटप
वाणी में प्रकट करते हुए कबीर साहब हिन्दू और मुसलमानों
अपना कट्टरपन दूर करने के लिये कहते हैं। उनके लिए समा
के रीति रिवाज निराकार को पाने के मार्ग में रुकावट हैं। ये बंध
मनुष्यके हृदय पर एक मायाजाल बिछा देते हैं। आदमी वास्तवि
निराकार की उपासना को भूल जाता है और इन बन्धनों को
आदर्श मान लेता है। उसके लिये ये दीवार का काम देते हैं,जिसे
परे उसकी दृष्टि कभी जाती ही नहीं। भला कबीर जैसे सन्त क
इन बन्धनों को कैसे सह सकते थे। आपने स्पष्ट तौर पर ब्राह्मणों
और मुल्लाओं को, जो धर्म के रक्षक बने हुए थे, बुरी तरह
फटकारा। इनके उपदेशों ने उनको और भी अधिक चिढ़ा दिया
आपने मूर्ति-पूजा के विरुद्ध कठोर वाणी में इस तरह लिखा —

पाथर पूजे हरि मिले तो मैं पूजूँ पहार।
ताते यह चक्की भली पीस खाय ससार॥

नमाज पढ़ने वाले मुल्लाओं को बुरा-भला कहा, बाग देने
वालों के विरोध में लिखा, इस तरह उपवास, तिलक आदि
सामाजिक आडम्बरो का खोखलापन बतलाते हुए अपने लोगों

को अनुभव कराने का यत्न किया कि इनसे निराकार नहीं मिल सकता। राम तो हृदय में रमते हैं, इसके लिये मन की माला फेरने की आवश्यकता है, काठ की नहीं। इस तरह कबीर ने हिंदू और मुसलमानों को मिलाने की कोशिश की। आपने एक ऐसे मत की नींव डालनी चाही, जिसे दोनों दलों के लोग स्वीकार कर सकें। इस मत को कबीर पन्थ भी कहते हैं, जिसको मानने वाले कुछ लोग मिलते हैं। किन्तु इसका प्रचार अधिक न हो सका, क्योंकि हिन्दुओं को एक मुसलमान से उपदेश लेना प्रिय न था। इसका कारण एक और भी था कि हिन्दुओं के लिये अपने पौराणिक देवी-देवताओं को छोड़ना एक असम्भव-सी बात थी। मुसलमानों में भी इनके मत का प्रचार न हो सका, क्योंकि इन्होंने कई हिन्दू सिद्धान्तों को अपनाया। परिणाम यह हुआ कि कबीर साहब ने दोनों दलों के लोगों पर आक्रमण किया और उनके धर्मग्रन्थों को भला बुरा कहा, परन्तु इनके चेलों में हिन्दू और मुसलमान दोनों थे। कहते हैं कि जब इनका देहान्त हुआ तो मुसलमानों ने इनके शरीर को दफ़न करना चाहा और हिन्दुओं ने जलाना। दोनों दलों में झगड़ा होता रहा। आखिर जब इनके शरीर से कफ़न उतारा गया तो वहां फूलों का एक ढेर पाया गया। आधे फूल मुसलमान चेले ले गये और आधे हिंदू। एक ढेर को जला कर उसकी राख पर समाधि बनाई गई, जो अब तक है। दूसरे को दफ़ना कर क़ब्र बनाई गई। जिस पर मुसलमान कबीर-पन्थी आजकल प्रतिवर्ष एकत्रित होते हैं। इस तरह हिन्दी कविता के प्रमुख रह-

स्यवादी कवि का अन्त हुआ। इसका प्रभाव आने वाले सन्तों और आधुनिक छायावादी कवियो पर काफ़ी गहरा पडा है।

गुरु नानक

निराकार की उपासना करने वाले गुरु नानक रहस्यवादी सन्त सिख-सम्प्रदाय के प्रथम गुरु थे। आपने पजाब में इस मत को चलाया। उस समय इस प्रान्त में इस्लाम धर्म और हिन्दू धर्म के सघर्ष के कारण अशान्ति फैलने का भय था। गुरु नानक ने उसे दूर करने का सफल यत्न किया। आपने अपनी मधुर वाणी से इन दोनों दलों के विचारों को मिलाने का यत्न किया। कबीर के उपदेशों का उन पर विशेष प्रभाव पडा था। उनके ग्रन्थ साहब में कबीर की वाणी मिलती है। यह कबीर साहब की तरह अधिक पण्डित नहीं थे। केवल अनुभवी सन्त थे। इनकी वाणी इनकी आत्मा की वाणी थी। जिसका प्रभाव सीधा लोगों के हृदयों पर पडा। आप कबीर साहब की तरह निराकार ईश्वर के उपासक थे। उस रहस्यमय शक्ति की खोज में सदा भजन करते रहते थे। आपने भक्ति-भाव मे उमड कर अपने हृदय के प्रभाव से लोगो को इस मत पर चलाया और कहा कि इस छोटे से जीवन में वह जितना भजन कर लें, थोडा है। बाक़ी सब वस्तुएँ मिट जायँगी, मगर नाम बाकी रह जायगा—

सुमरन करले मेरे मना!
तेरि बीति जात उमर हरि नाम विना।
कूप नीर बिनु, धेनु छीर बिनु, मंदिर दीप बिना।

जैसे तरुवर फल बिन हीना तैसे प्राणी हरिनाम बिना ॥
देह नैन बिन, रैन चन्द बिन, धरती मेह बिना ।
जैसे पंडित वेद विहीना तैसे प्राणी हरिनाम बिना ॥
काम, क्रोध, मद, लोभ निहारी छाँड दे अब सन्त जना ।
कहे 'नानकशा' सुन भगवता या जग में नहिं कोई अपना ॥

इस प्रकार के सन्त कवियों ने समाज पर दो भारी उपकार किए। एक तो इन्होंने हिन्दू और मुसलमानों को मिलाने का यत्न किया। इन्होंने उपदेश दिया कि परमेश्वर एक है। केवल अज्ञानवश हम उसको अलग-अलग मान लेते हैं। धार्मिक झगडे अकारथ हैं, सब मार्ग एक ही स्थान को जाते हैं। इस प्रकार इन्होंने उस रहस्यमय शक्ति की एकता स्थापित की। दूसरा उपकार उन्होंने जो समाज पर किया वह यह कि उन्होंने दलित जातियों को उठाया और उनको देश-भाषा में उपदेश दिया। इससे पहले सब शिक्षा संस्कृत भाषा में हुआ करती थी। यह पण्डितों की भाषा थी। सन्त कवियों ने पहली बार लोगों की भाषा को अपनाया और अपने रहस्यवाद के भावों को सीधी, सरल और अशिक्षित भाषा में साधारण लोगों तक पहुँचाया। इससे नीची जातियों में एक प्रकार की जागृति पैदा हो गई।

रहस्यवाद में परिवर्तन

कबीर आदि सन्त कवियों की वाणी खुरदरी थी। इस में ब्रह्म की निराकार उपासना का उपदेश दिया गया था। यह

कुछ लोगों के लिये नीरस था। इसमें ज्ञान अधिक था, परन्तु हृदय की कोमलता कम थी। वह ज्ञान राम और रहीम को एक ठहराकर दोनों धर्मों का मेल कराने में कुछ सफल तो था, परन्तु वह लोगों के हृदय को स्पर्श नहीं करता था। धर्म के क्षेत्र में एकता को स्थापित तो करता था, परन्तु व्यवहारिक जीवन की एकता के लिये प्रेम के भाव अधिक उपयोगी हो सकते थे। ज्ञान लोगों के दिलों को नहीं मिला सकता था। इसके साथ पुराणों की जो निंदा निराकारी रहस्यवादी सन्तो ने की, वह कुछ समय के बाद जनता को रुचिकर न हुई। लोगों ने अपने जीवन में प्रेम के अभाव को अनुभव किया। उस समय मलिक मुहम्मद जायसी ने 'पद्मावत' काव्य लिखकर इस आवश्यकता को पूरा किया। आप एक सूफ़ी कवि थे। सूफी ईश्वर को निराकार तो मानता है, परतु उसको एक अनन्त प्रेम का भण्डार भी पाता है। इन सूफी कवियों की परपरा देर से चली आ रही थी, परन्तु इनमें जायसी ही प्रमुख कवि थे।

पद्मावत

'पद्मावत' जायसी का प्रसिद्ध काव्य है। इसमें प्रेम की जो पीर बतलाई गई है, वह लौकिक और अलौकिक दोनों ही दृष्टि से अनूठी बन पडी है। कथा अति सरल है। सिंहल राजा की पुत्री पद्मावती ने एक तोता पाल रखा है। किसी कारण तोता वहाँ से भाग जाता है, एक बहेलिया उसको पकड कर एक

ब्राह्मण के पास बेच देता है । ब्राह्मण उसे चित्तौड के राजा रत्नसेन के पास बेच देता है । एक दिन रत्नसेन की रानी नागमती ने उस वाचाल तोते से अपने रूप गुण के बारे में पूछा । तोते ने पद्मावती के रूप गुण की बहुत प्रसंसा की । रानी को क्रोध आया और उसने अपनी नौकरानी को, तोते को मार डालने की आज्ञा दी । पर उसने राजा के भय तोते को छिपा रखा। राजा के लौटने पर तोता उसके पास लाया गया और उसने सारा हाल कह डाला । पद्मावती के रूप और गुण की प्रशंसा सुन कर राजा उससे व्यथित हो गया और उसकी खोज मे चल पडा । कवि ने उसके विरह-भावो को बडी सुन्दरता और कोमलता क साथ प्रकट किया है । राजा को राह दिखाने वाला तोता था और सहायता करने वाले सोलह हजार कुमार थे। जिन्होने योगियो का रूप बनाया हुआ था । सिंहल देश पहुंच कर ये लोग शिव-मन्दिर मे योग साधने लगे । तोता पद्मावती के पास पहुँचा । पद्मावती सारा हाल सुन कर दुखी हो गई । वह उसी मन्दिर मे पूजा के लिये आई । रत्नसेन बेसुध हो गया । जब उसे होश आया तब पद्मावती वहाँ से चल दी थी । उस ने संदेश भेजा कि गढ को विजय करो । सुबह हो जाने पर योगियों ने दुर्ग घेर लिया । शिवजी की सहायता हुई । अन्त में दोनो का विवाह होगया और वे थोडे दिनोंके बाद अपने देश लौट आये । यह काव्य की प्रधान कहानी है । जायसी ने मुसलमान कवि होते हुए हिन्दू राजा और रानी की कहानी को लेकर अपने

सूफी भावों को प्रकट किया है। इस कहानी में पद्मावती आदर्श है। रत्नसेन इस आदर्श की खोज में है। तोता उसका साधन है, जिसकी सहायता से वह अपने आदर्श को पा लेता है। सूफी कवियों ने आध्यात्मिक आदर्श को स्त्री के रूप में बतलाया है। वैष्णव कवि, जिनकी आगे चल कर चर्चा की जायगी, इस आदर्श को पुरुष के रूप में बतलाते हैं। उनके लिये कृष्ण आदर्श हैं। उसको खोजने वाली गोपियां हैं, परन्तु पद्मावती को खोजने वाला राजा रत्नसेन है। इन दोनों में यह भारी भेद है।

अन्य सूफी कवि

इस तरह की कहानियों को लेकर जायसी से पहले कुतबन, चौर, मञ्झन आदि सूफी कवियों ने रहस्यवादी काव्य लिखे हैं। कुतबन के 'मृगावती' नामक काव्य में एक सरल कथा को लेकर सूफ़ी या रहस्यवादी भावों की छाप लगाई गई है।मृगावती की कथा इस प्रकार है। गनपतिदेव के पुत्र राजकुमार के लिये राजकुमारी मृगावती आदर्श है। मृगावती उडने की विद्या जानती है। इसके कारण वह एक दिन उड जाती है। राजकुमार व्यथित हो जाते हैं और उसकी खोज में निकल पड़ते हैं। बीच में आप एक स्त्री की राक्षस के हाथों से रक्षा करते हैं। उसका पिता उसे राजकुमार को सौंप देता है। अन्त में मृगावती से भी मिलन होता है। वह दोनों रानियों से विवाह कर घर लौटते हैं। एक दिन राजा हाथी से गिर कर मर जाता है। रानियाँ उसके साथ सती

हो जाती हैं। कवि ने इस कथा मे बताने की कोशिश की है कि स्वर्गीय प्रेम का मार्ग कितना कठिन है, इसके लिये कितने त्याग की आवश्यकता है। इस कथा का प्रेम सासारिक नहीं है, परन्तु ईश्वरीय है। इस प्रेम मे रहस्य के भावो का सुन्दर आभास हुआ है। इसी तरह मञ्झन कवि ने भी एक भारतीय कथा को लेकर सूफी भाव प्रकट किये हैं। इन सब में प्रेम-मार्ग के कष्ट और त्याग आदि का वर्णन कर, अज्ञात को पाने में जो कष्ट होते हैं, उनका भली प्रकार आभास कराया है। इन सब की भाषा भी प्राय एक सी है। यह भाषा अवध प्रान्त की है। सब सूफ़ी कवियो ने दोहों, चौपाइयों में अपने ग्रन्थो की रचना की है। इन सब का प्रेम ईश्वर के प्रति है। परन्तु ईश्वर तो निराकार है और निर्गुण है। उसका आभास देने क लिये सूफी कवियो को इन कहानियो की सहायता लेनी पडी है। इनके रहस्यवाद और कबीर के रहस्यवाद मे भेद यह है कि कबीर आदि सन्तो का रहस्यवाद ज्ञान प्रधान ह, अथवा वे निराकार को पाने के लिये ज्ञान को ही साधन बनाते हैं। उपासना उनके लिये गौण है। इसलिये उनका रहस्यवाद कविता के लिये उतना उपयोगी नहीं है। ज्ञान नीरस होता है, परन्तु कविता रस चाहती है। इधर जायसी आदि का रहस्यवाद प्रेम-प्रधान है। प्रेम म मधुरता और कोमलता होती है। इस प्रकार के भाव कविता क लिये अधिक उपयोगी होते हैं। इसलिये रहस्यवाद की दृष्टि से जायसी की कविता अधिक सफल बन पडी है।

आधुनिक रहस्यवादी कविता

आधुनिक रहस्यवाद पर उपनिषदों और कबीर आदि सन्तों का गहरा प्रभाव है। पुराने भावों को एक नया रूप देकर सब से पहले बङ्गाल के महा-कवि श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपनी अमर कविता में रहस्यवाद की झलक दिखाई है। आप चाहे हिन्दी भाषा के कवि नहीं हैं, परन्तु आपकी कविता का हिन्दी कवियों पर काफ़ी असर पड़ा है। यहा तक कि कुछ कवियो ने तो केवल नकल मात्र ही की है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर को जब गीताञ्जलि पर नोबेल पुरस्कार मिला, तो भारत के साहित्यिक ससार में एक प्रकार की हलचल-सी मचगई। छोटे-मोटे कवियो ने आपकी नकल करनी आरम्भ करदी। उन्होंने समझा कि ऐसा करने से शायद वे भी नोबेल पुरस्कार के भागी बन सकेंगे। क्रमश. हिन्दी कविता मे रहस्यवाद की एक प्रकार की बाढ़-सा आगई। कोई इसको छायावाद के नाम से पुकारने लगे, कोई प्रकृतिवाद के नाम से। समालोचकों में इन बातो के सम्बध में पर अच्छा वाद-विवाद हुआ। धीरे-धीरे कवि अनुभव करने लगे कि यह सब अकारथ था। कविता में असली बात जीवन का गहरा अनुभव ही है। यह अनुभव श्री ठाकुर की कविता में विद्यमान है। इसके लिये महाकवि ने कठिन साधना की है, जिसका हिन्दी के अनेक रहस्य-वादी कवियों में अभाव है। महाकवि ने उपनिषदो और कबीर आदि सन्त कवियों की कविता का अध्ययन किया है।

आपने कबीर की एक सौ सारियों का अंग्रेज़ी में सुन्दर अनुवाद किया है। आजकल की रहस्यवाद की कविता का एक कारण तो यह है कि यह भाव पुराने हैं। दूसरे आजकल शहरों मे बसने से कवियों की दृष्टि प्रकृति के सुन्दर दृश्यो की ओर अधिक आकर्षित होने लगी है। शहर का जीवन बनावटी है, शहर के लोग सीधे और सरल नहीं हैं। यहाँ पर मशीनों का धुआँ है, सडकों पर धूल है, मकान बन्द हैं, आकाश और तारों के कभी-कभी दर्शन होते हैं। इन बातों के कारण मनुष्य अपनी आत्मा को बन्द-सा पाता है। उसको विकसित करने के लिये वह प्रकृति की ओर भागता है, इस काम में कविता सहायता देती है। आजकल के कवि भी इस कामना को पूरा करने के लिये प्रकृति के सुन्दर और कोमल दृश्यों का वर्णन कर लोगों के दिलो को शान्ति देते हैं। इन दृश्यों में वह परोक्ष शक्ति का भी अनुभव करते हैं, जिसका आभास कबीर आदि सन्तों ने सीधे और सादे ढग पर कराया है।

जयशकर प्रसाद

आधुनिक कवियों में इस प्रकार की कविता करने वाले स्वर्गीय जयशकर 'प्रसाद' का नाम सब से पहले आता है। आप आजकल की सभ्यता का भली प्रकार विरोध करते हैं। "कानन कुसुम", जो उनकी पहली रचना है, वह बताते हैं कि मनुष्य इस लम्बे ससार-मार्ग मे वेग के साथ चले ही आ रहे हैं। वे विश्राम को

नहीं जानते। वे प्रकृति के सौन्दर्य पर ध्यान नहीं देते। उनसे कवि कहता है—

कुसुम-वाहना प्रकृति मनोज्ञ वसंत है,
मलयज मारुत प्रेम भरा छविवन्त है।
खिली कुसुम की कली अलीगण घूमते,
मदमाते पिक पुञ्ज मंजरी चूमते।
किन्तु तुम्हें विश्राम कहाँ है नाम को,
केवल मोहित हुए लोभ से काम को।
ग्रीष्मासन है बिछा तुम्हारे हृदय में,
कुसुमाकर पर ध्यान नहीं इस समय में।

इस पद में कवि ने सुन्दरता के साथ वर्णन किया है कि चारों ओर वसन्त का राज्य है, स्नेह से भरा मलय-समीर बह रहा है। कुसुमों के आसपास भौंरे घूम रहे हैं। कोयल मस्त होकर मंजरी का स्वाद ले रही है, किन्तु मनुष्य को अपने लोभ और काम से कहाँ विश्राम? उसके हृदय में वसन्त की जगह पर ग्रीष्म है, क्योंकि वह फूलों की सुन्दरता पर ध्यान नहीं देता। आगे चलकर थके हुए पथिक से कवि अनुरोध करता है कि मार्ग पर चलने का जो पागलपन उसमें है, उसे त्याग दे और बैठकर देखे कि सौन्दर्य सर्वत्र बिखरा हुआ है। यही कवि प्रसाद के जीवन की कुँजी है। यही भाव कवि ने बार-बार 'प्रेम पथिक' 'करुणालय' और 'झरना' में प्रकट किये हैं।

"प्रसाद" की कामायनी

'कामायनी' आपकी काव्य-धारा की चरम सीमा है। रहस्यवाद की कविता में यह एक घटना है। इस काव्य को सरल करने के लिये इसकी कहानी को जान लेना आवश्यक है। साधारण कहानी केवल इतनी ही है—कामायनी का नायक 'मनु' महाप्रलय के बाद बच जाता है। वह अनुभव करता है कि देवताओं की सभ्यता का पतन हो गया है। मनु चिन्तित है। एकान्त में उसका मन घबराता है। इसी समय काम गोत्र की बाला कामायनी से उसका परिचय होता है। कामायनी उसके पास रहने लगती है। वह मनु के हृदय म मानवीय सस्कारों की जड डालना चाहती है। मनु के पुराने देव सस्कार फिर जाग उठते हैं। वह शिकार करते, यज्ञ करते और बलि चढाते हैं। कामायनी उसके बाद माता बनती है। उसकी ममता प्राणियों में बट जाती है, पर मनु चाहते हैं कि वह किसी और से स्नेह न करे। इस स्पर्धा और अहकार क कारण मनु का मन चचल हो जाता है। वह भाग खडे होते हैं। सारस्वत देश में उसकी भेट वहा की रानी इडा से होती है। इडा देवों की बहन है। इडा को ऐसे आदमी की खोज थी जो उसक उजडते हुए देश को सँभाल सके। मनु शासन-कार्य को सम्भालने के लिये उद्यत हो जाते हैं। राज्य खूब बढता है। परन्तु मनु को इतना अधिकार पाने पर भी शान्ति नहीं है। उसका मन इडा की ओर बार-बार

दौडता हैं। आप उस पर भी अधिकार चाहते हैं। इस पर देवता कुपित हो जाते हैं। और प्रजा विद्रोह कर देती है। युद्ध में मनु घायल हो जाते हैं और बेहोश पडे रहते हैं। इसकी सूचना कामायनी को अपने स्वप्न में मिलती है। वह वहा पहुच कर अपनी सेवा से मनु को होश मे लाती है। मनु का स्नेह फिर से उसकी ओर उमडता है। इसके बाद कामायनी अपने पुत्र को इडा के हाथ सौंप देती है और उससे लोगों का कल्याण करने के लिये कहती है। स्वय फिर मनु की खोज में चल देती है। एक पर्वत की घाटी में उनसे भेंट होती है। मनु को जो अपनी भूलों को समझ चुका है, ससार के विविध रूपों का दर्शन कराती है। चलते-चलते वे एक समतल स्थान पर पहुँच जाते हैं। यही मानसरोवर और कैलाश है, यहा पर मनु को ज्ञान होता है, उसके भेदों और शकाओं का क्षय होता है, उसे आनन्द का अनुभव होता है। यही इस कथा का सार है। इसी आनन्द को पाना जीवन का आदर्श है। मनु मानव-समाज का प्रतिनिधि है। अपनी अनेक उलझनों से सग्राम करता हुआ आगे बढता है, गिरता है और फिर उठता है। वह अशान्त है। उसकी जीवन-यात्रा जारी है। अन्त में समता को पाकर उसके जीवन का शोक शान्त हो जाता है। उसका जीवन एक नदी के समान है, जो कोलाहल करती हुई सागर को पाकर शान्त हो जाती है। सागर में एक प्रकार की समता है। यही समता जीवन का आदर्श है। कवि का अनुभव है कि जीवन के सघर्ष और

दुःख का कारण केवल एक है। वह ससार में वस्तुओं के अपने-अपने स्थान पर न होने के कारण है। अगर वे अपने-अपने स्थान पर हों तो जीवन आनन्दमय हो जाता है। हम इन सब वस्तुओं को तिरछी दृष्टि से और रगीन रूपों मे देखते हैं। भावो के आवेश में आकर हम उनकी वास्तविकता भूल जात हैं। अगर हममें मनु की तरह समता आजाय, तो इन वस्तुओं से वैरागियों की तरह न तो भागने की आवश्यकता है, न ससारियों की तरह चिपटने की आवश्यकता है, यही इस महाकाव्य का सन्देश है। इसमें उपनिषदों के सन्देश को कवि ने अपनी वाणी में प्रकट किया है। यही कवि प्रसाद का आधुनिक रहस्यवाद की कविता को महादान है।

कवि ने अपने अनेकों गीतों में प्रकृति का सौंदर्य, हृदय का विषाद और आँखों के आँसुओं का वर्णन किया है। इन सब में असली रहस्यवाद का अश इतना नहीं है, जितना इसमें जीवन की पीडा, हृदय की आशा, निराशा और विकलता है। "आँसू" में कवि, जीवन के रसमय अतीत को याद करता है, उसके अभाव में रोता है, पर रोकर जीवन का अन्त नहीं कर देता। इसके विपरीति रोदन को जीत कर मन को आशा देने का प्रयास करता है। जब अतीत की याद आती है तो कहता है—

जीवन की जटिल समस्या,
है बढी जटा-सी कैसी।

उड़ती है धूल हृदय में,
किसकी विभूति हैं ऐसी ?

और आँसूओं को अपने जीवन का सगी बतलाता हुआ कवि वर्णन करता है—

तुम सत्य रहे चिर सुन्दर,
मेरे इस मिथ्या जग के।
थे केवल जीवन-सगी,
कल्याण कलित इस मग के।

इसके बाद रोकर जब कवि अपने हृदय को हल्का पाता है तो आशा के भाव प्रकट करता है और कहता है—

पतझड था, झाड खड़े थे,
सूखी सी फुलवारी में।
किसलय नव कुसुम बिछाकर,
आये तुम इस क्यारी में।

इस तरह धीरे-धीरे आशा की झलक कवि के जीवन में बार-बार आने लगी। जीवन के विषाद और दु:ख के साथ सग्राम कर कवि कामायनी के मनु की तरह उस समता का अनुभव करता है जिससे सारा ससार आनन्दमय प्रतीत होने लगता है। यहीं उसकी कविता की महानता और रहस्य है।

युगान्तरकारी पन्त

श्री सुमित्रानन्दन पन्त ने रहस्यवाद की कविता में अनेक समालोचकों के मतानुसार एक युगान्तर-सा पैदा कर दिया है।

पन्त का रहस्यवाद अधिकतर प्रकृति के सुन्दर दृश्यों तक सीमित रहता है। पन्त पर्वतीय होने के कारण नदी, नालों, पहाड़ों, बादलों किरणो आदि का अनुपम वर्णन करते हैं। इनमें सूक्ष्म रूप से उस परोक्ष शक्ति का भी आभास करा देते हैं, परन्तु सौन्दर्य के पुजारी प्रकृति के खेल में अपने आपको इतना भूल जाते हैं कि इसको खिलाने वाली शक्ति उनकी आँखों से प्राय. ओझल हो जाती है। आप बादल आदि मे अपने आपको भूल जाते हैं। फूलों की सुगन्ध आपको मस्त कर देती है, सरिता का सगीत आपको मुग्ध कर देता है। प्रकृति की रमणीयता से चकित होकर आप उसी का वर्णन करने लग जाते हैं। इसलिये इनकी कविता को छायावाद के नाम से पुकारा गया है। इनमें केवल प्रकृति के दृश्यों की रमणीयता नहीं बल्कि शब्दों की कोमलता और मृदुलता भी है। आप सदा ऐसे शब्दों की खोज में रहते हैं, जिनमे मधुरता भरी हो और सगीत हो। आप पूरा प्रय॰ करते हैं कि कविता मे कठोर शब्द न आ जायँ। कविता करते समय इनका काम उस चित्रकार के समान है, जो कभी-कभी भावों का परित्याग कर चित्र को विविध रगों से सजाने का काम कर जाता है। उसमे बनावटी-पन तो आ जाता है, परन्तु चित्र आँखों को भला लगता है। इसी तरह पन्त की कविता में कभी-कभी स्वाभाविकता का परित्याग हो जाता है, यही कारण है कि इनकी कविता में भावों का वेग कम है और कोमलता अधिक है। इसी सयम के कारण आप धीरे-धीरे

कल्पना में है कसकती वेदना।
अश्रु में जीता सिसकता गान है,
शून्य आहों में सुरीले छन्द हैं,
मधुर लय का क्या कहीं अवसान है।

आप सारे संसार में इस मधुर लय का आभास पाते हैं, कल्पना में वेदना पाते हैं और आँसुओं में सिसकता हुआ गीत सुनते हैं। श्री सुमित्रनन्दन पन्त आँखों के और कानों के कवि हैं। रंग और संगीत इनकी कविता का आदर्श है, सौन्दर्य्य के आप पुजारी हैं। कहते तो हैं कि इस संगीत और सौन्दर्य का अवसान नहीं है, परन्तु साथ यह भी अनुभव करते हैं कि ये अस्थिर हैं। जब इनका रस-पान करते-करते अति हो जाती है तो कवि अपने हृदय में एक वेदना-सी अनुभव करते हैं। यह वेदना तब पैदा होती है जब मनुष्य किसी बात की, विशेष कर भावों की, अति को अनुभव करता है। इसके बाद उसके मन में एक उदास भाव पैदा हो जाता है। श्री सुमित्रानन्दन की कविता में भी यही उदासी का भाव छाया हुआ प्रतीत होता है। यह उदासी अति मधुर और कोमल होती है। इस में कठोरपन नहीं होता। श्री पन्त इस तरह प्रकृति की रमणीयता को प्रकट करते हुए कभी-कभी उस परोक्ष शक्ति का आभास कराते हुए जीवन की मीठी वेदना और मृदु विषाद को वर्णन करते हैं। परन्तु बार-बार इन्हीं भावो का वर्णन करने से इनकी

कविता मे विषय की समानता आ जाती है, जिससे वह फीकी पड जाती है। इन सब के होते हुए आप आधुनिक रहस्यवाद या छायावाद के प्रमुख कवि हैं।

सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला"

रहस्यवाद के तीसरे कवि श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' हैं। आपने बगाल में रहकर बगाली साहित्य का काफ़ी अध्ययन किया है। स्वामी रामकृष्ण परमहस और स्वामी विवेकानन्द के विचारों पर गहरी दृष्टि डाली है। इसलिये इनके लेखों और कविता में वेदान्त की स्पष्ट झलक मिलती है। आपने आत्मा और परमात्मा का अटूट सम्बन्ध, जीवन की असारता, ससार की मोह माया आदि प्राचीन विचारों को भी मौलिकता का रूप दिया है। "तुम और मैं" कविता में यह अटूट सम्बन्ध प्रकट कर इसको एक गम्भीर रहस्यवादी कविता बना दिया है। आप लिखते हैं—

तुम दिनकर के खर किरण-जाल में सरसिज की मुस्कान,
तुम वर्षों के बीते वियोग, मैं हूँ पिछली पहचान।
तुम योग और मैं सिद्धि,
तुम हो रागानुग निश्छल तप,
मैं शुचिता सरल समृद्धि।
तुम मृदु मानस के भाव और मैं मनोरंजिनी भाषा,
तुम नदनवन-घन-विटप और मैं सुख शीतल-तल शाखा।

इस तरह वह आगे चल कर कहते हैं कि ईश्वर प्राण है और जीव काया है। वह पथ है और जीव रेणु है। कविता इस प्रकार की उपमाओं से दबी हुई-सी मालूम होती है। इनमें विचार की मात्रा अधिक है और भावो की कम। इसलिये आपको दार्शनिक रहस्यवादी कवि भी कहा गया है। विचारों की गम्भीरता अधिक होने के कारण आप साधारण पाठको की पहुँच के बाहर हैं भाषा की क्लिष्टता के कारण भी आपको समझने मे कठिनता होती है। 'फुटकर' कविता मे हम इसी क्लिष्ट पदावली का दृष्टान्त पाते हैं। कहीं-कहीं आपकी पदावली सरल और सुगम भी होती है। जिस तरह 'खेवो !' कविता में रहस्यवादी भावो को प्रकट करते हुए आप कहते हैं—

डोलती नाव, प्रखर है धार,
सँभालो, जीवन-खेवन हार !
तिर-तिर फिर-फिर
प्रबल तरंगों में
घिरती है,
डोले पग जल पर
डगमग — डगमग
फिरती है !
टूट गई पतवार, जीवन खेवनहार।

इस कविता में खेवनहार को सम्बोधन करके कविने अपने ■ के भावों को सरल भाषा में प्रकट किया है। आपकी रहस्यवा

कवितायें एक गम्भीर प्रवाह में बह रही हैं'। 'परिमल" की प्रार्थना है—

जग को ज्योतिर्मय कर दो,
प्रिय कोमलपद-गामिनि ! मद उतर
जीवन मृत-तरु-तृण गुल्मों की पृथ्वी पर
हँस हँस नित पथ आलोकित कर
नूतन जीवन भर दो,
जग को आलोकित कर दो !

गीतों में ससार की असारता को कवि ने गम्भीर शब्दों में वर्णन किया है। आप लिखते हैं कि अन्त मे सब की एक-सी गति होती है। व्याकुल होने की कोई आवश्यकता नहीं। जितने ससार में आए सब चले गये, चाहे वे बुरे थे या भले थे। जितनी चिन्ताएँ और बाधायें आती हैं, आये। मनुष्य का हृदय अन्धा हैं इसी तरह मदा चला जाता है। इस तरह ससार में बँधे हुओ को कवि सन्देश देता है कि सब को अन्त पथ का पथिक बनना पडता है। बडी बडी अभिलाषाये काल-चक्र से पिस जाती हैं। इस तरह 'पारस' कविता में आप लिखते हैं कि जीवन की विजय में ही पराजय हैं—

जीवन की विजय, सब पराजय
चिर अतीत-आशा, सुख सब भय
सब मे तुम, तुम में सब तन्मय,
कर स्पर्श-रहित और क्या है ? अपलक असार।
मेरे जीवन पर यौवन बन के बहार

यहा पर 'तुम' का प्रयोजन उस अनन्त ज्योति से है जो प्रति पल हमारे जीवन को आलोकित करती है। "सब में तुम, तुम मे सब तन्मय !" से उसी शक्ति का परिचय होता है। इस तरह "निराला" की कविता में रहस्यवाद और छायावाद की पुट है। कवि प्रकृति में अनन्त की खोज करता रहता है। कभी-कभी इसी मे लीन भी हो जाता है। यह बगाली कविता का प्रभाव है। कवि ने स्वय लिखा है कि उस पर बगाली के आधुनिक अमर साहित्य का काफ़ी प्रभाव पडा है। इसलिये आपकी शैली में कभी-कभी बगालीपन की झलक मिलती है। इसी प्रभाव के कारण आपने हिन्दी कविता में 'मुक्त छन्द' को आरम्भ किया। आप की कविता की भाषा जटिल है, परन्तु आपके गीतों में अधिक सरलता है। इसलिए कि गीत गाई जाने वाली वस्तु है, यदि गायक इनको गा नहीं सकता तो गीतों की प्रधान उपयोगिता जाती रहती है। इन गीतो में जीवन की गहरी वेदना है, भाव हैं, अलकारों की सजावट है, सगीत और मधुरता है। "निराला" जी के गीतों का स्थान आपकी रहस्यवादी कविताओं से ऊँचा रहेगा।

महादेवी वर्मा

श्रीमती महादेवी वर्मा छायावाद या रहस्यवाद की एक प्रमुख कवियित्री है। "रश्मि" की भूमिका में आप लिखती है—मनुष्य, का जीवन, चक्र की तरह घूमता रहा है। स्वच्छन्द

घूमते-घूमते थक कर वह अपने लिये सहस्र बन्धनों को पैदा कर लेता है और फिर बन्धनों से ऊब उनको तोडने में अपनी सारी शक्तियाँ लगा देता है।" आप आगे चल कर कहती हैं कि मनुष्य सुख को अकेला भोगना चाहता है, परन्तु दु ख सब को बाँट कर। वह चाहती हैं कि विश्व-वेदना मे अपनी वेदना को इस प्रकार मिलादे जिस प्रकार एक जलबिन्दु समुद्र में मिल जाता है।

श्रीमती वर्मा बचपन से भगवान बुद्ध के प्रति अनुराग रखती हैं। बुद्ध भगवान् इस ससार को दुख-सागर समझते थे। इस लिये श्रीमती वर्मा की कविता मे निराशा की झलक का होना स्वाभाविक है। दुख क्या है ? उसका जीवन और कविता से क्या सम्बन्ध है ? इन सब पर आपने अपने भाव प्रकट किये हैं। दुख को अपनाना आपक जीवन का आदर्श है। आपका अनुभव है कि असीम दुख का अन्तिम परिणाम आनन्द होता है। दुख की हिलोरों में सुख का अनुभव होता है। "नीहार" और "रश्मि" की रचनाओं में दुखवाद की भावना इतनी अधिक है कि ऐसा जान पडता है कि कवियित्री इस आदर्श को पाने के लिये व्याकुल हैं। 'गीत' नामक कविता में इस बात की झलक है कि हमारा जीवन एक वीणा के समान है। इस वीणा से मधुर सगीत को पैदा करना वादक क हाथ में है। यह अज्ञात बजाने वाला हमारे अनजान में कितनी ही बार आकर इस वीणा से कभी बेसुरी और कभी मधुर झकार बहा जाता है। यह कभी विश्व-सगीत मे

मिल कर उस से एक हो जाती है और कभी बेसुरी हो कर उससे अलग। इसी तरह "आशा" में वह अपने भाव प्रकट करती हैं कि सीमित जीवन का असीम-से सयोग होते ही उससे एक ऐसा प्रवाह बहेगा जो सारे जगत को सगीतमय कर देगा। जिसे आज हम दुख का सागर समझते हैं, उसी मे तब सुख के अनेक बुलबुले उठने लगेंगे। दुख की रेखायें जो आज धुँधली-सी लग रही है, इन्द्रधनुष के रग मे रँगी जायगी। "पहचान" में आप लिखती हैं कि मनुष्य का परिचय देना एक प्रकार से असम्भव बात है। वह कहा से आता हैं, कहाँ जाने वाला है, उसके आदि और अन्त का क्या कारण है, इन सब प्रश्नों का उत्तर कौन दे सकता है। मनुष्य का जीवन अनन्तकाल में एक बुलबुले के समान बनता और बिगडता है। जिस प्रकार बुलबुला समुद्र का इतिहास और अपने बनने-बिगडने कारण नहीं जानता, उसी प्रकार मनुष्य अपने जीवन पर एक चकित चितवन डालकर अपनी अज्ञानता प्रकट करता है। "निभृत मिलन" का भाव यह है कि जिस प्रकार मिट्टी के जड दीपक का हम अग्नि से सयोग कर उसे सजीव और प्रकाशमय बना देते हैं। उसी प्रकार कोई चुपचाप आकर जड मे चेतना डाल कर उसे सजीव और प्रकाशित कर जाता है। जड और चेतन का यही मिलन जीवन का कारण है। "मैं और तू" में कवियित्री ने रहस्यवाद के भावों को सुन्दर उपमाओ से प्रकट किया है। आपका कहना हैं कि सीमित और असीम में वैसा ही सम्बन्ध है जैसा चन्द्रमा और उसकी रश्मि में, जो पृथ्वी

को छूकर उसी मे लौट जाती है, समुद्र और उसकी लहर में, जो तट को छूकर उसी मे मिल जाती है, वसन्त और उसकी श्री में, जो उसके साथ आती-जाती है, नींद और स्वप्न में जो उसी में बनती और बिगड़ती है। इसी प्रकार के रहस्यवादी भावों को आप नीचे दी हुई सुन्दर पंक्तियों में भी प्रकट करती हैं—

बीन भी हूँ मैं तुम्हारी, रागिनी भी हूँ!

नींद थी मेरी अचल निष्पंद कण-कण मे,
प्रथम जागृति थी जगत के प्रथम स्पन्दन मे,
प्रलय में मेरा पता, पद-चिह्न जीवन में,
शाप हूँ जो बन गया वरदान बन्धन में,
कूल भी हूँ, कूलहीन प्रवाहिनी भी हूँ!

"नीहार" में, जो आप का पहला संग्रह है, आप निराशा और सूनेपन के भाव प्रकट करती हैं। "अतिथि से" में कहती हैं—

पहली-सी झंकार नहीं है
और नहीं वह मादक राग,
अतिथि! किन्तु सुनते जाओ
टूटे तारों का करुण विहाग!

युवावस्था में इन भावों का अनुभव करना स्वाभाविक है। "मेरा राज्य" में सूनेपन के भाव को सुन्दर शब्दों में चित्रित किया है—

अपने इस सूनेपन की
मैं हूँ रानी मतवाली,
प्राणों का दीप जलाकर
करती रहती दीवाली।

"अधिकार" में भी इसी प्रकार के निराशा के भाव मिलते हैं—

वे मुस्काते फूल, नहीं—
जिनको आता है मुरझाना।
वे तारों के दीप नहीं—
जिनको भाता है बुझ जाना,

अन्त में आपका कहना है कि "क्या अमरों का लोक मिलेगा, तेरी करुणा का उपहार"? इसलिये अपने देव से वह मिलने का अधिकार चाहती हैं। "मुरझाया फूल" में आप एक 'कुसुम' का इतिहास वर्णन करती हैं कि किस तरह एक दिन वह एक कली था। किस तरह समीर ने उसको थपकियाँ देकर खिलाया, चन्द्र की किरणों ने उसको हँसाया, मधुप ने लोरियाँ गाकर उसे सुलाया। अब उसका अन्त क्या है? वह धरा पर बिखरा हुआ सो रहा है। न उसमे कोमलता है, न गन्ध है। उसको कोई चाहने वाला नहीं। यही मनुष्य के जीवन का अन्त है। "नीहार" के लगभग सभी गीतों में महादेवी ने जीवन की असारता, उसके सूनेपन और उसकी निष्फलता को गाया है। इस पुस्तक में आशा की रेखा बहुत धीमी है। यह रेखा आपके अगले समह "रश्मि" में दिखाई देती है। आशा की रश्मि धीरे-धीरे उनके जीवन और

कविता के धुंधलेपन से चमक उठती है। इन कविताओं का सार पहले दिया गया है, जिनमे कवियित्री अपने जीवन को अनन्त जीवन से एक कर देना चाहती है। इसके लिये विकल है, जब वह अनुभव करती है कि उसका जीवन विश्व-जीवन का एक अंश है तो सुख पाती है। यही भाव कबीर आदि सन्त कवियों ने अपने युग में प्रकट किये हैं। "नीहार" में दुख का अनुभव है। "रश्मि" में इस दुख पर विजय पाने की विधि है, वह यह कि मनुष्य अपने दुख से निकल कर विश्व की करुणा को समझे, अपने जीवन के संगीत को सुन कर विश्व-संगीत में लीन हो जाय, अपने आपको प्यार करने के स्थान पर विश्व से प्रेम करे। यही "रश्मि" की कविताओं का सार है।

"नीरजा" आपका तीसरा संग्रह है। इसमें आपने जीवन की आशा को प्रकट किया है। आप निराशाओं से दबी नहीं। इनसे संग्राम बराबर जारी रहा। दुख का अनुभव करते हुए आपके भावों में एक पवित्रता-सी आ गई है। जब दुख होता है तो इसके दो प्रभाव पड़ सकते हैं—या तो जीवन में कटुता आ जाती है या मधुरता। महादेवी की कविता में मधुरता आ रही है। सुन्दर प्रकृति की किरणों, बादलों, तारों, फूलों आदि में विचर कर महादेवी मनुष्य के जीवन के लिये एक नया सन्देश लाती हैं। आप एक कविता में लिखती हैं कि मेरा जीवन वही पुरानी कहानी है जिसको बादलों ने, कलियों ने कई बार सुनाया है। ये बादल आशा का सन्देश लाते हैं, सुधा

बरसाते हैं । इसमे घुलमिल जाना जीवन का सन्देश है। इस तरह दुखवाद की कविता सुखवाद में बदल जाती है। श्री निर्मल जी का मत है कि "सान्ध्य-गीत" (चौथा कविता-सग्रह) आपकी सर्वश्रेष्ठ रचना है। गीतों का इतना सुन्दर सग्रह किसी भी कवि का नहीं है। श्रीमती वर्मा के मन-मोहक गीत प्राणों में जीवन देने वाले हैं। ये गीत हिन्दी-ससार के अनुभूति-प्रधान काव्य के लिये नई चीज हैं। इन गीतों की लोक-प्रियता इसी से सिद्ध है कि पिछले वर्ष और आज भी जितने गीत लिखे जा रहे हैं, उन पर श्रीमती वर्मा के गीतो का पूरा प्रभाव जान पड़ता है। वही छन्द, वही भाव और लगभग वैसी ही भाषा है।

अन्य रहस्यवादी कवि

श्री जगन्नाथ प्रसाद "मिलिन्द" छायावाद के प्रसिद्ध कवियों मे से हैं। आपकी पहली कविताओं में प्रकृति के सौन्दर्य का परिचय मिलता है। तब फूल, कली, उपवन, भ्रमर आदि विषयों पर आपने कवितायें लिखी हैं। उन मे सरसता और मधुरता अधिक है। इसके बाद आपने रहस्य के पर्दे को खोल कर उसके दर्शन कराने का प्रयत्न किया है। कवि अनन्त को प्रकृति के भीतर हँसते हुए देखता है और सुख-दुख के पार बसने वाले आनन्द की कामना करता है। कविताओं में आनन्द की झलक और विचारों की गहराई है। एक अन्धा गायक 'तीन कलाकार" में कहता है—

सहसा कभी नाच उठती है
आते ही प्रियतम की याद—
खँजरी पर उँगलियाँ, कण्ठ में
तानें, ओठों पर आह्लाद।
\+ + + +
त्रिभुवन का आलोक तुम्हारे
अन्तर में भर जाता है
अत बाहरी जग मे तुमको
तिमिर शेष रह जाता है।

इस कविता में मूक चित्रकार कहता है—

उसी भुवन नायक की भाषा
मौन तुम्हारी है भाषा,
तुम रंगीन विश्व के राजा
नीरव जगती की आशा।

और बधिर कवि कहता है—

जग के कलुषित कोलाहल में
सदा सुरक्षित है "सुन्दर"
श्रवणों पर पट डाल, हृदय में
छिपा रखा प्रियतम का स्वर।

इस प्रकार कितनी ही कविताओं मे कवि के रहस्यवादी भावों की झलक मिलती है। एक स्थान पर आप एक ऐसे महा-सगीत की कामना करते हैं जिसके स्वर में जीवन की छोटी-छोटी

तानें लीन होजायँ। अपने हृदय में और नयनों में आप एक अमर सौन्दर्य को बसाने की साधना कहते हैं। आप कहते हैं—

प्राणों की वीणा पर छेड़ो
ऐसा एक महा संगीत,
लीन तुच्छ तानें जीवन की
हों जिसके व्यापक स्वर में।
एक अमर सौंदर्य बसादो
मेरे नयनों में, उर में।
क्षणिक रूप के कण खोजावें
जिस की छवि के सागर में।
क्षुद्र कामनायें मैं अपनी
जिस में लय करदूँ सारी,
ऐसा महानुराग जगादो
मंगलमय! इस अन्तर में।

ये विचार श्रीमती महादेवी के विचारों से बिलकुल मिलते हैं। भाव तो पुराने हैं, लेकिन कहने का ढंग अपना है। रहस्यवाद की कविता में बार-बार इसी प्रकार के भाव मिलते हैं। कवियों के इन भावों के कहने की शैली अलग-अलग है।

श्री मोहनलाल महतो का नाम भी रहस्यवाद के कवियों में आता है। आप अपने आप को रवीन्द्रनाथ ठाकुर का शिष्य मानते हैं। इनकी कविता में अपने गुरु के रहस्यवादी भावों की झलक मिलती है। "निर्माल्य", "कल्पना" और "एकतारा" आपकी

कविताओं के संग्रह हैं। 'एकतारा' में रहस्यवाद की अधिक झलक है, परन्तु बाकी दोनों में भी इसका अभाव नहीं है। 'माया' कविता में आप लिखते हैं—

जान पड़ा मैं धुँधला बादल बन कर बढ़ता जाता हूँ,
तेरे मधुर तान में अपनी तान मिला कुछ गाता हूँ।
इतने में तू न जाने क्या बोल उठा?
विस्मित-सा हो मैं भी आँखें खोल उठा।
तुझे नहीं फिर पाया,
कैसी अद्भुत माया!!

इसी तरह सरिता का जीवन-संगीत क्या है, वह कहती है कि मैं "अन्तहीन सागर में मिलकर एक दिन सागर ही हो जाऊँगी।" एक और कविता में कवि गायक को चुप रहने के लिये अनुरोध करता है और कहता है कि तुम्हारा गाना निष्फल है, क्योंकि मुक्त गगन में वीणा की कैसी सुन्दर झङ्कार गूँज रही है। एक और स्थान पर कवि कहता है कि इस संसार-समुद्र में जीवन एक जीर्ण नौका है। उसे अज्ञात देश की ओर जाना है, किन्तु नौका इतनी दुर्बल है कि उसका पार लगना कठिन है। लहरों में उसकी क्या दशा होगी यह उसकी गति पर निर्भर है। इस प्रकार के भाव श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविता में कई स्थानों पर मिलते हैं।

इन सब रहस्यवादी कवियों में दो बातें पाई जाती हैं। सब से पहले ये कवि उस अज्ञात, अगोचर और अनन्त की झलक पाने की शक्ति रखते हैं। इस शक्ति का अनुभव वे प्रकृति के विविध

रूपों में पाते हैं। इसकी सुन्दर वस्तुओं का वर्णन करते हुए वह इसी शक्ति का आभास कराते हैं। इन कवियों में दूसरी बात यह है कि ये जीवन की अलग-अलग और बिखरी हुई वस्तुओं में एकता का अनुभव करते हैं। इन कवियो का विचार है कि जीवन का स्रोत एक है, चाहे यह विविध रगों मे प्रकट होता है। ये दोनों भाव रहस्यवाद की कविता में आदिकाल से चले आरहे हैं। इनको अनेक कवियो ने अपने अनुभव और शक्ति के अनुसार प्रकट करने का यत्न किया है। हिन्दी कविता में कबीर से लेकर वर्तमान काल तक रहस्यवाद की एक अटूट धारा बहती आ रही है। जिसका वर्णन ऊपर किया गया है। अलग-अलग कवियों का इस धारा को जितना दान है, उसका भी उल्लेख किया गया है कबीर आदि सन्त कवियों का रहस्यवाद ज्ञान प्रधान था, वे ज्ञान को साधन बनाकर निराकर को पाने का यत्न करते थे। जायसी आदि सूफी कवियों का रहस्यवाद प्रेम-प्रधान था। वह निराकार को प्रेम का अनन्त भडार समझते थे। आजकल के रहस्यवादी कवियों का रहस्यवाद सौन्दर्य-प्रधान है। ये कवि सौंदर्य को साधन बनाकर उस शक्ति का अनुभव करते हैं।

(३)

वैष्णव वाद या भक्तिवाद

राम-भक्ति

कबीर आदि सन्त कवियों ने राम को निराकार का रूप दिया। साधारण लोगों के लिये यह जटिल बात थी कि वे निराकार

की उपासना कर सकें। इसके अतिरिक्त उनके लिए अपने पुराणों के साकार देवताओं का परित्याग करना भी कठिन बात थी। अगर सन्त कवियों ने राम को निर्गुण मान कर वेदान्ती होने का परिचय दिया, तो तुलसीदास ने साधारण लोगों के लिये राम को सगुण मान कर अपने भक्ति-भाव का परिचय दिया। यह राम वाल्मीकि की रामायण में एक शक्तिशाली राजा के रूप में चित्रित किये गये थे। रामायण में इनको ईश्वर का अवतार नहीं माना गया था। धीरे-धीरे यही राम भगवान विष्णु के अवतार माने जाने लगे। इनकी उपासना होने लगी। राम-भक्ति का विकास होता गया। इसलिये इस भक्ति की कविता को वैष्णववाद का नाम दिया जाता है। इस सम्प्रदाय के लोगों के लिए सब संसार सिया-राम-मय हो गया।

गोस्वामी तुलसीदास

गोस्वामी तुलसीदास राम-भक्ति शाखा के प्रमुख कवि थे। आपने स्वामी रामानन्द के उपदेशों को ग्रहण किया और राम की उपासना का प्रचार किया। तुलसीदास युक्तप्रान्त के बाँदा जिले में राजापुर गाव के निवासी थे। इनके पिता का नाम आत्माराम और माता का नाम हुलसी था। कहा जाता है कि बचपन में ही आप माता-पिता से अलग हो गये थे। इस अवस्था में आश्रयहीन होकर इधर उधर घूमने-फिरने का उल्लेख तुलसीदास की रचनाओं में मिलता है। इस समय उनको अपने गुरु बाबा नरहरि से रामचरित सुनने का अवसर मिला। गोस्वामी

तुलसीदास के भक्त और कवि वनने का कारण बडा विचित्र है। कहा जाता है कि विवाह के बाद एक बार इनकी स्त्री अपने मायके चली गई। आप घोर वर्षा में अपनी ससुराल पहुँचे। वहाँ स्त्री ने इनको बहुत फटकारा और कहा अगर वह इतनी भक्ति राम की करे तो मुक्ति मिल जाय। इस घटना ने आपके हृदय पर गहरा प्रभाव डाला। यदि ये कटु शब्द उनकी स्त्री न कहती तो आज हमारे पास हिन्दी का जगमगाता रत्न 'रामचरित मानस' न होता। स्त्री से विरक्त होकर तुलसीदास साधु बन गये और देश का विस्तृत भ्रमण किया। अन्त में काशी में आकर 'रामचरित मानस' लिखने बैठे। इसको आपने अढाई वर्ष में समाप्त किया। 'रामचरित मानस' का ससार एक आदर्श ससार है। इसमे राम आदर्श पुत्र हैं, आदर्श राजा हैं, सीता आदर्श पत्नी है, कौशल्या आदर्श माता है, भरत और लक्ष्मण आदर्श भाई हैं, हनुमान आदर्श सेवक हैं। इस ससार को बिगाडने वाली केवल एक शक्ति है। मन्थरा इस ससार को एक बार ऐसा हिला देती है कि यह ससार फिर से अपने पुराने आदर्श को नहीं पाता। इस महाकाव्य का लोगो पर गहरा प्रभाव पडा। उस समय हिन्दू समाज बिखरा हुआ था। उसको एक सूत्र में बाँधना कठिन काम था। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, कबीर और जायसी आदि कवियों ने हिन्दुओं और मुसलमानों को मिलाने का भरसक यत्न किया, परन्तु वह वे अधिक सफल न हो सके। जो काम वे न कर सके, उसको तुलसीदास ने 'रामचरित मानस' लिख कर किया।

फिरता था कि राम के नाम पर कोई मेरे हाथ का भोजन खाकर मुझे हत्या से छुडा दे। गोस्वामी के कानों मे यह आवाज़ पडी। आपने राम नाम के नाते उसे बुलाया और बडे प्रेम से अपने साथ भोजन कराया। यह जान कर काशी के ब्राह्मणों ने बड़ा कोलाहल मचाया। जब गोस्वामी जी से पूछा गया तो आपने उत्तर दिया कि राम नाम का प्रभाव ही ऐसा है। पडित-समाज भला यह बात क्यो मानने वाला था। उन्होंने कहा, 'यदि इस हत्यारे के हाथ से विश्वनाथ का नन्दी खा ले तो हम माने कि यह हत्या से मुक्त हो गया'। सब के देखते-देखते राम नाम के पवित्र प्रभाव से पत्थर के नन्दी ने उसके हाथ से खा लिया। अब पडितों की आँखें खुलीं। सब लोग भगवान का भजन करने लगे। इस पर कलि बहुत चिढा। गोस्वामी ने इससे दुखी होकर हनुमान के आगे अपने सारे दुख को रोया और कहा कि वह यह पत्रिका रघुनाथ की सेवा मे ले जायँ। इसी पर गोस्वामी ने 'विनय पत्रिका' लिखी। यही इस पत्रिका का प्रयोजन है। इस मे वार-वार राम के भजन को गाया है और अपने आप को दीन बतलाया है। आप लिखते हैं, "मैं बुरा भला जो कुछ भी हूँ, वह आपका ही हूँ। मैं आप से झूठ क्यों कहने चला। आप तो घट-घट की जानते हैं। आपसे छिपा ही क्या है। मैं कर्म, वचन और हृदय से यह कहता हूँ कि मैं आपका हूँ।" एक और स्थान पर लिखते हैं कि मैं राम का सेवक हूँ। आपने मेरा नाम राम-बोला रखा है, मेरी नौकरी क्या है? यही कि

दिन भर राम का नाम लेता रहूँ, जो अच्छी तरह रखेंगे तो केवल रोटी कपड़ा लूगा। यह इस लोक की बात है, पर परलोक में मुक्ति मिल जाएगी। इसी भाव को एक और स्थान पर आप इस तरह प्रकट करते हैं कि राम गरीबों को निहाल कर देते हैं। उसी का नाम वेद पुराण सभी गाते हैं। ध्रुव, प्रह्लाद, विभीषण, सुग्रीव, जटायु आदि को राम ने मोक्ष दिया। यह आप ही का काम था। इस तरह विनय पत्रिका में राम नाम का भजन किया है। इन पदों मे सगीत अधिक है, कविता के भाव कम हैं। भक्ति का रस होने से ये भजन देहात मे गाये जाते हैं। इसी के कारण इनका जन साधारण मे इतना अधिक प्रचार हुआ है।

रामचरित मानस

कविता की दृष्टि से 'रामचरित मानस' अधिक सफल है। यह महाकाव्य ससार के महाकाव्यों मे अपना एक अमर स्थान रखता है, ऐसा समालोचकों का मत है। 'रामचरित मानस' में समाज के एक आदर्श परिवार का चित्रण किया गया है। इसमें इतने भावों को प्रकट किया गया है कि जिनका एक काव्य में आना कठिन बात है। इसके विशाल ससार मे अनेक चरित्र हैं, अनेक भाव है अनेक वर्णन हैं और अनेक रस हैं। हर एक रस का वर्णन करने मे महाकवि सफल हुए हैं। कौशल्या और दशरथ के रोने में करुण-रस है, लक्ष्मण के चरित्र और रावण क साथ युद्ध के वर्णनों मे वीर-रस है, हनुमान क चरित्र में वात्सल्य है, ऋतुओं के वर्णन में शृगार है, रामचन्द्र के लक्ष्मण को समझाने में शान्ति-रस, युद्ध के वर्णन में

रौद्र-रस है। इस तरह 'रामचरित मानस' में सब रसों का वर्णन है, अलङ्कारों की तो भरमार है। तुलसीदास अलङ्कार और छन्द-शास्त्र के पूरे पण्डित थे। कबीर आदि सन्तों की तरह अनपढ़ नहीं थे। अर्थालंकार, शब्दालंकार और इनके भिन्न-भिन्न भेदों पर आपका पूरा अधिकार था। अवधी भाषा में इस काव्य को लिखकर आपने इस भाषा को अमर स्थान दे दिया है। आपकी चौपाइयाँ हिन्दी कविता में अपना विशेष स्थान रखती हैं। इनका इतना सफल प्रयोग और किसी कवि ने नहीं किया। 'रामचरित मानस' कविता और भक्ति दोनों की दृष्टि से वैष्णव कविता की एक अमर रचना है।

मैथिलीशरण गुप्त

तुलसीदास के बाद रामचरित को इतने विशद रूप में और किसी कवि ने अंकित नहीं किया। परन्तु मैथिलीशरण गुप्त ने 'साकेत' लिखकर रामायण की कथा को खड़ी बोली में उपस्थित किया है। इस काव्य में रामचरित का गान इतना अधिक नहीं किया गया, जितना लक्ष्मण और उर्मिला का। लक्ष्मणादि की तुलसीदास ने प्राय उपेक्षा ही की है। गुप्त जी ने लक्ष्मण और उर्मिला के चरित्रों को प्रधान बना कर 'साकेत' को एक नवीनता प्रदान की है। आपने इसलिये इसका नाम भी रामचरित मानस नहीं रखा। 'साकेत' नाम रखने से उनका अभिप्राय यह है कि पहले तो राम का चरित्र प्रधान नहीं है और दूसरे कवि सब चरित्रों

के साकेतनगरी में एक बराबर दर्शन कर सकते हैं। यद्यपि 'साकेत' के नायक लक्ष्मण हैं, फिर भी रामचन्द्र और सीता का उसमें अपना स्थान है। रामचरित मानस मे तुलसीदास ने रामचन्द्र को ब्रह्म और सीता को माया माना है, भक्त कवि ने उनको मोक्ष पाने का एक साधन बनाया है। आपके सामने मोक्ष का प्रश्न भी प्रधान था। 'साकेत' में यह बात नहीं है। यहा कवि मुक्ति के प्रश्न को लेकर नहीं चलता है। स्वय 'साकेत' के रामचन्द्र का कहना है कि वह भूमि पर स्वर्ग का सदेश लेकर नहीं आये। परन्तु भूमि ही को स्वर्ग बनाने आये हैं। तुलसीदास और गुप्त के सामाजिक दृष्टिकोण में यही भेद है तुलसीदास के समय में लोग अपने-अपने मोक्ष पर अधिक ध्यान देते थे। आजकल लोग सामाजिक मुक्ति चाहते हैं। एक आदमी को मोक्ष मिलने से समाज का कल्याण नहीं हो सकता। इन दोनों काव्यों मे यह एक भारी भेद है। 'साकेत' के रामचन्द्र गौण होते हुए भी अपनी प्रभुता की वाणी मे कहते हैं कि वह इस भूमि पर सुख देने और दुख झेलने आये हैं। यह उनकी लीला है, अथवा नाटक है, जिसे आप सदा से खेलते आये हैं। लक्ष्मण क चरित्र को प्रधानता देने से 'साकेत' में एक दोष आ गया है। कवि को उर्मिला के चरित्र को भी अधिक स्थान देना पड़ा। इसक नवें सर्ग में उर्मिला एक करुण भाषा में अपने दुख को रोती है। पति के वन चले जाने पर उर्मिला अपनी व्यथा को प्रकट करती है। 'साकेत' के बाकी सर्गों की भाषा अलग है, छन्द अलग है, भाव अलग हैं, परन्तु यह उर्मिला की व्यथा का

सर्ग काव्य से भिन्न प्रतीत होता हैं। कथा के विकास मे यह एक विचित्रता है। यहाँ आकर कथानक ठहर जाता है। सम्भव है कि यह आजकल की लिरिक कविता का कवि पर प्रभाव हो। इस कविता मे कवि हृदय के भावों को अधिक प्रकट करना हैं। प्रबन्ध कविता मे हृदय के भाव इतने प्रधान नहीं होते। इसमें घटना या कथा का विकास प्रधान होता है। क्योंकि आधुनिक काल में लिरिक कविता की एक बाढसी आगई है, इसलिये कवि इसके प्रभाव से बिल्कुल मुक्त नहीं हैं। उर्मिला के मुख से इस प्रकार के भाव कवि प्रबन्ध-काव्य मे प्रकट कर ही देता है। महात्मा गाधी ने इसी पर आपत्ति की है और आपकी आलोचना उचित भी हैं। कवि गुप्त ने इस आपत्ति का उत्तर देनेके लिये एक वक्तव्य भी दिया था, परतु आपका दृष्टि-कोण ठीक नहीं जान पडता। इस दोष के होते हुए भी 'साकेत' हिंदी कविता में एक महत्त्वपूर्ण रचना हैं। कवि को इस काव्य पर मगलाप्रसाद पारितोपिक भी मिल चुका हैं। आजकल वैष्णव कविता बहुत कम लिखी जाती हैं। धीरे-धीरे इसका विलोप हो रहा है। भक्ति-भाव जनता के लिये इतने रुचिकर नहीं रहे हैं। इसके विशेप कारण हैं, जिनका निराशावाद की कविता में उल्लेख किया जायगा।

कृष्ण-भक्ति

, तरह वाल्मीकि रामायण में राम केवल एक ... के रूप मे आते हैं और अवतार नहीं बने, इस...

महाभारत के पहिले पर्वों में अवतार नहीं बने । धीरे-धीरे कृष्ण राम की तरह अवतार बन गये । जनता इनको भगवान मानने लगी । आप भगवद्गीता में अवतार होकर संसार का भार उतारने के लिये और इस भूमि पर अपनी लीला करने के लिये आये । पर गीता में कृष्ण केवल एक सम्प्रदाय के नहीं हैं, आप सब जगत का और सब सम्प्रदायों का कल्याण करने वाले हैं । जो जिस भाव से उनकी भक्ति करेगा, उसी भाव से आप उसको मिलेंगे । उसके बाद भागवत पुराण में, जो कृष्ण चरित्र का एक महाग्रन्थ है, आपकी भक्ति स्थिर हो गई । कृष्ण-भक्ति के अनेक सम्प्रदाय चल पड़े, जिनमें भगवान के विविध रूपों की उपासना होने लगी । क्योंकि कृष्ण विष्णु के अवतार थे, इस लिये आपकी भक्ति में जो कविता लिखी गई है, वह वैष्णववाद की दूसरी शाखा है । पहली शाखा राम-भक्ति की शाखा है । इस कविता के प्रचलित होने के कारण वही हैं जो राम-भक्ति की शाखा के थे । इस पर भागवत पुराण का सब से गहरा प्रभाव है । इस पुराण की यदि अश्लील बातों को छोड़ दिया जाय तो उससे बढ़कर रसमय पुस्तकें संसार में बहुत कम होंगी ।

मीराबाई

कृष्ण-भक्ति के प्रमुख कवियों में मीरा का नाम अमर है । आपकी कविता में एक प्रकार की ऐसी टीस है, जो अन्य कवियों में नहीं मिलती । इस प्रकार की गहरी वेदना जो आपके प्रसिद्ध पद "मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई ।" आदि में

इनके पदो में मधुर सगीत है, भावो की तन्मयता हैं, वेदना है, हृदय की सरलता और भोलापन है। आपका गुजराती साहित्य मे भी एक विशेष स्थान है।

सूरदास

मीरा के बाद हिन्दी के अमर कवि महात्मा सूरदास का उदय हुआ। इनकी सरल वाणी से लोगों के सूखे हुए हृदयो में आशा के अकुर पनप पडे। उस समय जनता मुगलों के कारण दुखी थी। दुख में भगवान को याद आ जाना एक स्वाभाविक बात थी। पीडित जनता भगवान की भक्ति में अपने दुखों को भुलाने लगी। सूरदास ने 'सूरसागर' को लिख कर लोगों के लिये एक भक्ति का प्रवाह बहा दिया। इस पुस्तक के सम्बन्ध में कहा जाता है कि इस में सवा लाख पदों का सग्रह था। अब तक 'सूरसागर' की जो प्रतिया मिलती हैं, उनमें छ हज़ार से अधिक पद नही मिलते। यही रायबहादुर श्यामसुन्दर-दास का मत है। इसकी कविता का विषय कृष्ण की बाल-लीला से लेकर मथुरा जाने तक फुटकर पद्यों में अकित किया गया है। सभी पद गाये जा सकते हैं। इन पदों की भाषा मधुर, सुकुमार और सगीतमयी है। कठोर और खुरदरे भावों का इसमें अभाव है। 'सूरसागर' की कोमलता उसका विशेष गुण हैं।

सूरसागर

'सूरसागर' की कथा कृष्ण के जन्म से आरम्भ होती है। उस काल की बाल-लीलाओं का जो विशद वर्णन सूरदास ने

किया है, वह और किसी कवि ने नहीं किया। अपने पुत्र के मुख को देखकर यशोदा फूली नहीं समाती। वह अभिलाषा करती है कि वह एक दिन उसे माँ कहकर पुकारेगा। इसको कवि ने सुन्दर शब्दों में प्रकट किया है—

सुत-मुख देखि जसोदा फूली।
हरषित देखि दूध की दँतुली, प्रेम मगन तन की सुधि भूली॥
बाहिर तें तब नंद बुलाए, देखौ धौं सुन्दर सुखदाई।
तनक तनक-सी दूध-दँतुलियाँ, देखौ नैन सफल करौ आई॥
आनँद-सहित महर तब आये, मुख चितवत दोउ नैन अघाई।
सूर, स्याम किलकत द्विज देखे, मनौ कमल पर बिज्जु जमाई॥

धीरे-धीरे बालक आकाश के चन्द्रमा को पाने के लिये रोता है। कहता है "मैया, मुझे यह चाँद ला दो।" जब किसी तरह हठ को नहीं छोड़ता तो यशोदा एक थाली में पानी भर कर चाँद के प्रतिबिम्ब को दिखला देती है। पर अब कृष्ण कुछ बड़े हो गये हैं। माँ पानी में चाँद दिखाकर अब उसे धोखा नहीं दे सकती। अब वह आकाश के चाँद को लेने का हठ करते हैं और कहते हैं, 'मैया, वह पास ही तो है। मैं उसे उछल कर पकड़ लूँगा। तुम यों ही मुझे बहका दिया करती हो। मैं समझ गया, तुम्हारे लाड प्यार को। अब मैं तुम्हारे धोखे में आने का नहीं।" इन शब्दों में कितना स्नेह है और बालक के भोलेपन का कितना सजीव वर्णन है। सूरदास कहते हैं—

लैहौं री माँ, चदा लहौगौ।
कहा करौ जलपुट-भीतर कौ, बाहर क्योंकि गहौंगौ ॥
यह तौ झलमलात झकझोरत कैसे कै जु चहौंगौ।
वह तौ निकट निकट ही दीसत, बरज्यौ हौं न रहौंगौ ॥
तुम्हरो प्रेम प्रगट में जानत, बौराए न बहौंगौ।
सूर, स्याम कहै कर गहि ल्याऊँ ससि-तन-ताप दहौंगौ ॥

इसके बाद कृष्ण बडे होकर सहेलियों क साथ खेलते हैं, उनके माखन चुराने के प्रसग भी बडे मधुर हैं। गोपियाँ बाहर से यशोदा के पास उलाहने लाती हैं। गोपियों और कृष्ण में शुद्ध स्नेह है। आगे चल कर कृष्ण सारे व्रजवासियो के हृदय में घर कर लेते हैं। गौओं को चराने का प्रसग अधिक सुन्दर है। मुरली की तान इतनी मधुर है कि सब गाये उसक वश में हैं। इन सब बातो का चित्रण सूरदास ने मधुर व्रजभाषा मे किया है। इसकी महिमा अपार है। जब व्रजवासियों का कृष्ण के साथ अगाध स्नेह हो जाता है। तब वह मथुरा चले जाते हैं। नगर के वासी कृष्ण के वियोग से विकल हो जाते हैं। कृष्ण नहीं आते हैं। इस विरह का वर्णन कवि ने बडी करुण भाषा मे किया है।

सूरदास कृष्ण के सहृदय भक्त थे। आपको भगवान की करुणा पर अपार विश्वास था। आप लिखते हैं कि जिस पर भगवान की कृपा हो जाती है, वह मोक्ष पाजाता है—

चरन-कमल बदौं हरि राई
जाकी कृपा पगु गिरि लघै। अधे को सब कछु दरसाई ॥

बहिरौ सुनै, मूक पुनि बोलै। रंक चले सिर छत्र धराई।
सूरदास स्वामी करुनामय। बारबार बंदौं तेहि पाई।

एक और पद में आप कहते हैं कि भगवान की भक्ति के बिना जीवन अकारथ है। जिस तरह मृग का राग के साथ स्नेह है, चकोर का चन्द्रमा के साथ, कमल का सूर्य के साथ, इसी तरह जीव का भगवान के साथ। जब यह स्नेह चला जाता है तब शरीर से प्राण भी चले जाते हैं—

तुम्हारी भक्ति हमारे प्रान।

छूटि गये कैसे जन जीवैं, ज्यों प्रानी बिनु प्रान॥
जैसे नाद-मगन बन सारँग बधै बधिक तनु बान।
ज्यों चितवै ससि-ओर चकोरी, देखत ही सुख मान॥
जैसे कमल होत परिफुल्लित देखत प्रियतम भान।
सूरदास, प्रभु हरिगुन त्यों ही सुनियतु नित-प्रति कान॥

इस पद में भगवान को जीवन का सार बतला कर भक्त को उनमें लीन हो जाने के लिये अनुरोध किया है। मृग, चकोर और कमल की उपमा अति सुन्दर और स्वाभाविक बन पड़ी है।

एक और पद में भगवान के प्रति अनन्य भक्ति का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि मेरा मन किसी और स्थान पर सुख नहीं पा सकता। प्रभु को छोड़ कर जो इधर-उधर सुख खोजता फिरता है, वह मूर्ख है। कामधेनु को छोड़ कर बकरी को कौन दुहेगा? जिस तरह जहाज से पक्षी उड़कर फिर जहाज पर लौट आता है, उसी तरह भक्त का मन भगवान में ही लगा रहता है। प्यासा

परम गगा के अमृत को छोड कर क्यो कुआँ खोदे ? जिस भौंरे ने कमल का रस पिया है, वह भला किस तरह कडवे करील क फल को चख सकता है । यह भक्त की अभिलाषा है कि वह भगवान मे लीन हो जाय । इस तरह कहाकवि सूरदास बार-बार भक्ति के भावो को प्रकट करता है। अपने आपको दीन और पापी बतला कर भगवान को कृपालु और क्षमाशील बतलाता है। यही उसके जीवन का सहारा है कि वह अपने आपको भगवान की भक्ति मे भूल जाय। इस प्रकार की कविता अन्य देशों में कम मिलती है। वैष्णव कवियो ने वात्सल्य रस से भरे भावो की कविता लिख कर भारतीय साहित्य को विशेष दान दिया है।

भारतेन्दु हरिश्चद्र

वैष्णव धारा के प्रमुख कवियो में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का नाम माननीय है। आप प्राय इस परपरा के अन्तिम कवि माने जाते हैं। इन्होने लगभग डेढ हजार पद लिखे हैं, जिनमे अधिकतर कृष्ण लीला के हैं। इनमे तीन प्रकार के पद हैं–विनय, बाल-लीला और गोपियो के खेल सम्बन्धी। इन पदों में किसी प्रकार की अश्लीलता को प्रकट नहीं किया। कृष्ण की लीला का वर्णन करते हुए अथवा अपने विनय-भावो को प्रकट करते हुए भारतेन्दु ने अपनी पदावली को सुकमार और सरस बनाया है। इनके सात काव्य सग्रह शुद्ध प्रेम रस से भरे हुए हैं जिनके नाम–(१) प्रेमफुलवारी (२) प्रेम-प्रलाप (३) प्रेमा वर्णन (४) प्रेम

माधुरी (५) प्रेम मालिका (६) प्रेम तरंग (७) प्रेम सरोवर हैं। प्रेम-फुलवारी में "जगत पावन करण" प्रेम का वर्णन है। इस पुस्तक को कवि ने चार भागों में बाँटा है। इसके सभी पद सुन्दर हैं। भक्त के हृदय में जो भाव पैदा होत हैं, उनका इसमें विशद वर्णन है। भगवान की श्यामल छवि का वर्णन करते हुए कवि उनके मुकट का वर्णन करते हैं, उनके ककण की शोभा बतलाते हैं और उनकी मधुर बाँसुरी की तान का प्रभाव वर्णन करते हैं। "प्रेम-प्रलाप" में भक्तों का प्रलाप है। उनकी विकलता और उनके अगाध स्नेह का सुन्दर वर्णन है। प्रेमाश्र वर्णन में सभी पद वर्षा ऋतु की क्रीडा के हैं। वर्षा हो रही है, लोग हिंडोलों पर झूल रहे हैं, कुञ्जों में छिपने का प्रयास कर रहे हैं। वर्षा के बाद भ्रमण करते हुए उनमें वार्तालाप हो रहा है, कृष्ण की लीला के वे गीत गाते हैं। इस ग्रन्थ में इन सब बातों का वर्णन है। 'प्रेम-माधुरी' भारतेन्दु की अपनी रचनाओं में उन्हें सब से अधिक प्रिय ग्रन्थ था। इसकी भाषा बहुत मँजी हुई है। विषय कृष्ण की भक्ति ही है। एक स्थान पर कवि लिखते हैं—

कान्ह भये प्रानमय प्रानभये कान्हमय
हिय में न जानी परै कान्ह है कि प्रान है।

विषय पुराना होने के कारण भारतेन्दु की वैष्णव-कविता में नीरसता सी आगई है। 'प्रेम माधुरी' आदि सभी ग्रन्थों में लगभग वही भाव और वहीं भाषा है। ऐसा जान पडता है कि सूरदास ने पहले से इस विषय का सारा रस निचोड कर सूरसागर में भर दिया

है। फिर भी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने कहीं-कहीं मौलिकता दिखाई है। 'प्रेम मालिका' में तीन प्रकार के पद हैं, एक तो लीला सम्बन्धी हैं, दूसरे भक्त की दीनता को प्रकट करते हैं और तीसरे पवित्र प्रेम के अनुभव को वर्णन करते हैं। प्रेम तरग के प्राय सभी पद साधारण सासारिक प्रेम के हैं। कुछ लीला सम्बन्धी भी हैं। प्रेम सरोवर एक अनूठा ग्रन्थ है। इसमें भगवान के प्रेम को पाने के लिये कष्टों का वर्णन है। साथ ही पवित्र प्रेम की महानता को भी बतलाया है। इस तरह इन सब ग्रथों में कृष्ण के प्रति शुद्ध प्रेम और अनन्य भक्ति है। इससे पहले रीति काल मे कृष्ण सम्बन्धी कविता में एक प्रकार की अश्लीलता आ रही थी। कवियो ने पवित्र कृष्ण प्रेम की ओट में अपने वासना-भावों को प्रकट किया। कविता अपने आदर्श से गिर गई थी। उस समय के कवि राजाओं के आश्रित थे। राजा लोग केवल उन कवियो को पुरस्कार देते थे, जो कलुषित प्रेम का वर्णन करते हों। जब भारतेन्दु ने कविता लिखना आरम्भ किया, तब वैष्णव कविता की दशा गिरावट की चरम सीमा तक पहुँच चुकी थी। हरिश्चन्द्र ने फिर से इस कविता में जान डाल दी और उसको अपने पुराने गौरव तक पहुँचाने का यत्न किया। उसमें पवित्रता के भाव भर कर कृष्ण-भक्ति को जनता के लिये आदर्श बना दिया। जिस समय यह कविता लिखी गई, देशवासी उसी धर्म-सकट मे थे, जिसमें सूरदास के समय की जनता थी। जिस तरह सूरदास ने भक्तो को उत्साह दिया। उसी तरह भारतेन्दु ने जनता को शान्ति दी। रीति-काल की टूटी-फूटी शृगारिक वीणा के स्थान

पर एक गम्भीर झंकार बजने लगी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने रीति कविता को अश्लील गलियों से निकाल कर शुद्ध वायु में सास लेने का अवसर दिया। इस लिये आप आधुनिक कविता के जन्मदाता माने जाते हैं और गीति काव्य की परम्परा के प्राय अन्तिम कवि समझते जाते हैं।

अयोध्यासिंह उपाध्याय

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के बाद केवल एक दो कवियों ने ही वैष्णव कविता की है। इनमे अयोध्यासिंह उपाध्याय का नाम प्रमुख है। आपने "प्रिय प्रवास" (काव्य) लिख कर वैष्णव कविता क गौरव को बढाया है। यह काव्य आपने खडी बोली' में लिखा है। इससे पहले वह प्राय ब्रजभाषा मे कविता करते थे। आप इस महाकाव्य की भूमिका में लिखते हैं—"यह काव्य खडी बोली में लिखा गया है। खडी बोली में छोटे-छोटे कई काव्य-ग्रथ अब तक लिपिबद्ध हुए हैं, परन्तु उनमें से अधिकाश सौ-दो सौ पद्यों में ही समाप्त हैं। जो कुछ बडे हैं, वे अनुवादित हैं, मौलिक नहीं। इसके अतिरिक्त मुझको एक ऐसे ग्रथ की आवश्यकता देख पडी, जो महाकाव्य हो और ऐसी कविता मे लिखा गया हो, जिसे भिन्न तुकान्त कहते हैं।" आपका भिन्न तुकान्त से अभिप्राय यह है कि छन्द के अन्त में तुक न हो और उसमें गति हो। पहले इस ग्रथ का नाम आपने 'ब्रजाङ्गना विलाप' रखा था। क्योंकि ब्रज की रहने वाली स्त्रियों को कृष्ण के मथुरा चले जाने पर दु ख हुआ। इन्होंने करुणा से भरे हुए भावों में विलाप किया। परन्तु यह विषय नहीं है, इसका

विषय कृष्ण की मथुरा-यात्रा है। इसलिये इसका नाम बदलना पड़ा और 'प्रिय प्रवास' रखा गया। मथुरा-यात्रा के सिवाय कृष्ण की ब्रज लीलाओं का भी इसमें वर्णन है। इस विषय का सूरदास आदि कवियों ने अपनी कविता में अधिक सुन्दर रूप में वर्णन किया है। इस महाकाव्य में माता के वियोग का वर्णन बड़ा करुण है। कृष्ण को इस काव्य में एक महापुरुष की भाँति अंकित किया है। अवतार के रूप मे नहीं। यह आधुनिक युग का प्रभाव है कि जनता अवतारो की उन लीलाओं पर अधिक विश्वास नहीं रखती, जो स्वाभाविक नहीं हैं। आपने गोवर्धन पर्वत को उठाने आदि की घटनाओं का वर्णन लौकिक दृष्टि से किया है। "प्रिय प्रवास" में इस घटना को आपने मुहावरे की खूबी से सम्भव और स्वाभाविक बना दिया है। आप ब्रज के वासियों को जल से बचाते हुए कृष्ण के कौशल का इस तरह वर्णन करते हैं —

लख अपार प्रसार गिरीन्द्र में, ब्रज-धराधिप के प्रिय पुत्रको।
सकल लोग लगे कहने उसे, रख लिया उङ्गली पर श्यामने॥

लोग कहते आये हैं कि कृष्ण ने पर्वत को अपनी अँगुली पर उठा लिया था। कवि यहा पर और ही बात कहता है-कृष्ण ने लोगों की रक्षा करते हुए ऐसा कौशल दिखलाया कि मानो उसने पर्वत को अँगुली पर ही उठा लिया हो। कवि के कहने में यहाँ कितनी चतुरता है। एक असम्भव घटना को सम्भव बना दिया है। जान पडता है कि अयोध्यासिंह उपाध्याय पुराने युग की कथा को आधुनिक युग के प्रकाश में नई दृष्टि से देखते

हैं। जो घटना अलौकिक जान पडती है, उसको या तो बदल देते हैं या निकाल देते हैं। इस बात में आप पर बङ्गाली के महाकाव्य "मेघनाद वध" का गहरा प्रभाव पडा है। इस काव्य में भी नये विचारों की धारा बह रही है। रावण को राक्षस के रूप में नहीं दिखाया गया, परन्तु वह भी साधारण पुरुष की तरह हृदय रखता है, अपने पुत्र मेघनाद के वध पर दुख अनुभव करता है। इस तरह रावण का चरित्र बिल्कुल काले रंग में अंकित नहीं किया गया। राम का चरित्र भी दोषों से खाली नहीं है। कवि राम को भगवान के रूप मे नहीं दिखाता, परन्तु उनको एक महापुरुष की पदवी देता है। रामायण की कथा को लेकर कविने महाकाव्य का नाम 'रामचरित मानस' नहीं रखा, परन्तु "मेघनाद वध" रखा है। इसी तरह मैथिलीशरण गुप्त ने अपने महाकाव्य का नाम 'साकेत' रखा है। क्योंकि वह इसमें राम की अपेक्षा लक्ष्मण के चरित्र को अधिक स्थान देना चाहते थे। यह आधुनिक युग का प्रभाव है, जिसके कारण कवियो ने पुराने महाकाव्यों को नये प्रकाश मे देखने का यत्न किया है। आधुनिक युग विज्ञान का युग है। विज्ञान में सदा नवीनता की खोज रहती है, पुरानी परिपाटी को बदलने का विचार रहता है। इन विज्ञान के विचारों मे बहकर अयोध्यासिंह उपाध्याय ने कृष्ण के चरित्र में परिवर्तन किया है। उनको देवताओं के स्वर्ग से नीचे लाकर भूमि पर महापुरुष की पदवी दी है।

'प्रियप्रवास' की वर्णन-शैली में मर्म अधिक है। कवि भूमिका में लिखते हैं—"कोई सक्षेप वर्णन को प्यार करता है, कोई विस्तृत वर्णन को। मैंने अपने ग्रथ में वर्णन के विषय में बीच के पथ को ग्रहण किया है।" कृष्ण के चले जाने पर ब्रज की दशा शोक के भावों से भरी हुई है। कवि ने एक स्थल पर प्रभात का वर्णन करने में अपनी प्रतिभा दिखाने का यत्न किया है। यद्यपि भाषा क्लिष्ट है, परन्तु भावों का अभाव नहीं है। एक के बाद दूसरी वस्तु का वर्णन करके आपने सन्ध्या के समय का पूरा चित्र खींचा है। तारे डूब गये हैं, आकाश में लाली फैल गई है, दिनकर धीरे-धीरे निकल आये हैं, सुकुमार बेलें वायु में धीरे-धीरे डोल रही हैं। प्रकाश वनों में और कुञ्जों में फैल गया है, परन्तु यह सब बातें ब्रजवासियों को मीठी नहीं लगतीं, क्योंकि कृष्ण मथुरा चले गये हैं। कवि लिखते हैं—

"प्रात शोभा ब्रज अवनि में आज प्यारी नहीं थी।
मीठा-मीठा विहग-रव भी कान को था न भाता।
फूले-फूले कमल दल थे लोचनों मे लगाते।
लाली सारे गगन-तल की काल व्याली समा थी॥

एक और पद में आप सन्ध्या के समय का वर्णन करते हैं। जिसमें प्रकृति का निरीक्षण है और इस समय का सुन्दर वर्णन है। कवि धीरे-धीरे चित्र अंकित करनेकी शैलीका अनुकरण करता हुआ लिखता है कि, "दिवसावसान समीप था। आकाश लाल हो चला था। शिखाओं पर डूबते हुए सूरज की किरणें शोभा दे रही थीं।

वन में पक्षियों का झुण्ड कोलाहल मचा रहा था। इस तरह एक बात को बतला कर दूसरी वस्तु का वर्णन करते हैं और उस समय का विविध रंगों में पूरा चित्र खींच देते हैं। यही इनकी अपनी शैली है। महाकाव्य में इसी तरह की शैली उचित होती हैं। क्योंकि कथा का विकास धीरे-धीरे होता है। "प्रिय प्रवास" वैष्णव धारा की कविता का आधुनिक यत्न है, परन्तु अब कृष्ण-कविता लिखने की रीति धीरे-धीरे कम हो रही है।

---

(४)

निराशावाद

सामाजिक परिस्थिति

निराशावाद हिन्दी कविता की चौथी धारा है। इससे पहले कविता का स्वरूप या तो वीर रहा है या धार्मिक। वैष्णव और रहस्यवाद की कविता में धार्मिक भावों की पुट है। एक वैष्णव के लिए जीवन का दुख माया है। एक रहस्यवादी के लिये जीवन के कष्टों की कोई वास्तविकता नहीं है। यह दुख और कष्ट पानी के बुलबुलों की तरह पैदा होकर फट जाते हैं। इस प्रकार के लोगों के लिए दुख और सुख स्थिर नहीं हैं। ये लोग या तो धर्म के भावों में शान्ति पा लेते हैं या इनको कर्म की गति मानकर टाल देते हैं। (१) आधुनिक युग में जनता को धर्म पर इतना विश्वास नहीं रहा, जितना पहले था। लोग केवल कर्म को भी दुख का कारण नहीं समझते। धीरे-धीरे ये विचार फैल रहे हैं कि जीवन के दुख के लिये सामाजिक विधान भी एक प्रधान कारण

हैं। इस लिए वह समाज को दोष देकर अपने दुख को कर्म की गति न मानकर भूल नहीं सकते। आधुनिक कवि इन विचारों को अपनी कविता में प्रकट करता है। ये विचार निराशा के भावों को पैदा करते हैं। इस लिये यह नवीन धारा आधुनिक कविता में बह रही है। इससे पहले कवियों ने जीवन की असारता को प्रकट किया है, पर जीवन के अन्त को दुख नहीं समझा। इस लिए पुराने नाटककारों ने भी दुखान्त नाटक नहीं लिखे। आजकल के उपन्यास, नाटक, चित्रपट, गाने निराशा के भावों को प्रकट करते हैं। (२) पश्चिम के विचारो के प्रचलित हो जाने से जनता के दिलों में स्वतन्त्रता के भाव पैदा हो गये हैं। परन्तु सामाजिक विधान वही पुराना है। इससे उनके मन का विकास नहीं हो सका। बन्धन अनेकों हैं—कहीं जात-पाँत का बधन है, कहीं खाने-पीने का। इस प्रकार के बन्धनों में जनता का हृदय फल फूल नहीं सकता। यह भी एक निराशा से भरी हुई कविता लिखे जाने का कारण है। (३) इसके सिवाय आधुनिक युग में स्त्रियों को शिक्षा मिलने लगी है। इस शिक्षा के कारण ये अपने आपको पुरुषों के बराबर समझती हैं, परतु समाज में उनकी पदवी पुरुषों से नीचे है। इस लिये उनको अपनी दशा पर दुख होता है और वे निराशावाद की कविता लिखती हैं। हिन्दी में कवियित्रियों ने इस प्रकार की कविता अधिक लिखी है। (४) आजकल बेकारी के कारण समाज की दशा अधिक शोचनीय हो गई है। सामाजिक बन्धनो के अतिरिक्त जनता को आर्थिक कष्टों का

भी सामना करना पडता है। ये कष्ट मनुष्य के जीवन को पीस देते हैं। (५) किसानों की गरीबी, शिक्षित लोगों की बेकारी, समाज के बधन, स्त्रियों की दीनता, धर्म और कर्म मे अविश्वास इन सब के कारण परिस्थिति करुणामय हो गई है। इस दशा में स्वाभाविक है कि कवि निराशा के भावों को प्रकट करे। इसी भाव को एक बगाली कवि ने 'जीवन की कथा को मन की व्यथा" कह कर प्रकट किया है।

तारा पाण्डे

निराशावाद की कविता लिखने वालों मे तारा पाण्डे का स्थान प्रमुख है। आप की कविताओं के तीन सग्रह छप चुके हैं। प्राय सभी कविताओं पर निराशावाद की छाप लगी हुई है। अपनी जीवन गाथा को तारा "सीकर" में इस प्रकार वर्णन करती हैं—

"किससे कहूँ ? कौन सुन लेगा, इस जीवन की करुण कथा ?
बार-बार मचली पडती है भोली भाली मौन व्यथा।
कहूँ कहाँ तक याद अरे बीती बातों को मैं अपनी ?
गिनते ही गिनते बीतेंगी, पता नहीं कितनी रजनी।
तारे ही हैं कवल सुख-दुख को सुनने के अभ्यासी।
जिन्हें देखती हैं रजनी मे मेरी ये आँखें प्यासी।
उस झिलमिल से अजब जगत मे उलझी पडती है पीडा।
खेल-खेल कर तारों से ही, आँसू करते हैं क्रीडा।"

इन शब्दों मे जीवन की गहरी पीडा है और करुण वेदना है। तारा पाण्डे को अपने जीवन में घोर कष्टों को सहना पडा है।

बचपन में ही आप को माता के स्नेह से वंचित होना पड़ा। आपका विवाह १४ वर्ष की आयु में हो गया। इसके बाद दो वर्ष तक रोगी रहीं। आप की बहुत-सी कवितायें बीमारी की दशा में लिखी गई। इसलिये कविता में जो वेदना और निराशा के भाव मिलते हैं, वे कोरे काल्पनिक नहीं, परन्तु तारा के सच्चे अनुभव हैं। एक स्थल पर आप लिखती हैं—

कितनी मनोव्यथा थी उसमें,
हृदय विकल हो आया था।
सन्ध्या में अपने जीवन की,
सन्ध्या को लख पाया था।

इस पद में वह जीवन के अन्त को सन्ध्या के रूप से पाती हैं, जो अन्धकारमय है। अपनी व्यथा को बार-बार सुनाने का यत्न करती हैं और कहती हैं—

वियोगी हो, या वैरागी—
कथा कुछ अपनी कहदो आप।
और बदले में हे सुकमार!
व्यथा सुनलो मेरी चुपचाप।

और आँसुओं को अपने जीवन का संगी और साथी समझती हैं। ये उमड़-उमड़ कर हृदय में आते हैं। मन का सारा मैल बहा कर ले जाते हैं। दुख में भी आते हैं, सुख में भी आते हैं। आप औरों के दुख-सुख के साथी बन जाते हैं। तारा निराशा के भावों से पराजित होकर कहती है—

खिलने से पहले ही मेरी,
मृदुल पखड़ी सूख चली।
परिमल और पराग हीन मैं,
मुरझाई हूं एक कली।

"परिचय" में इन भावों को और भी अधिक कसकती हुई भाषा में वर्णन करती हैं।

जीवन की कुछ चाह नहीं,
अभिलाषाओं का क्षार हुआ।
झूठे जग को निरख-निरख कर,
पागल-सा यह प्यार हुआ॥

आगे अपना परिचय देती हुई कहती हैं—

परिचय मेरा सुनो यही,
मैं स्वप्न जगत की हू रानी।
सखी, निराशा के सँग मैं—
फिरती रहती हू दीवानी॥

ये भाव तारा पाण्डे के नहीं, परन्तु सारे स्त्री समाज के हैं, जिन्हें आदिकाल से घोर कष्ट झेलने पड़े हैं। "सीकर" में तारा ने इन कष्टों की ओर सकेत किया है। यद्यपि भाषा और शैली इतनी पकी हुई नहीं है, परन्तु भावों में सरलता, वेदना और जीवन की पीडा है। तारा पाण्डे की कविताओं का दूसरा सग्रह "शुक पिक" है। इस में भाषा अधिक मँजी हुई है। भाव भी पके हुए हैं। पदों में सगीत और लय है। वेदना में मधुरता है। अपने

जीवन के दुख को अपना कर कहती हैं—

मैं दुख से शृंगार करूँगी
जीवन में जो थोड़ा सुख है,
मृग-जल है, उसमें भी दुख है,
छली गई बहु बार जगत में
फिर क्यों अपनी हार करूँगी ?
मैं दुख से शृंगार करूँगी।

तारा पाण्डे दुख से घबराती नहीं। इसको वे अपने जीवन का साथी समझती हैं। सुख और दुख जीवन में क्रम से आते रहते हैं। मनुष्य सुख को अपनाता है और दुख से दूर भागता है। परन्तु तारा पाण्डे ने जीवन के सार को इस तरह अनुभव किया है कि सुख-दुख बराबर हैं—

सुख दुख दोनों ही आवेंगे,
क्रम क्रम से छवि दिखलावेंगे।
इस भिक्षुक जग को सुख देकर,
दुख के सुख को प्यार करूँगी।
मैं दुख से शृंगार करूँगी।

आपने जीवन में इतनी पीड़ा अनुभव की है कि आपके लिये हँसना कठिन हो गया है। जीवन-दीपक के बुझ जाने से उत्साह नहीं रहा, चाह नहीं रही, आशा भी नहीं रही। खा-पीकर सो जाते हैं। प्रात उठकर थोड़ा सा काम भी कर लेते हैं और फिर वही क्रम। तारा की दृष्टि में जीवन का

इतिहास एक पंक्ति में बन्द हो सकता है। मनुष्य पैदा हुआ, उसने दुख भोगा और वह मर गया। यदि यही जीवन का इतिहास है तो वह किस हृदय से हँसे ? आप कहती हैं—

कैसे हँसू, बतादो ना!
जीवन में उत्साह नहीं है,
परिचित सुख की राह नहीं है,
जी भर हँसू, चाहती जी से,
कोई युक्ति बता दो ना!

आगे चल कर लिखती हैं, यदि जीवन दुखमय है तो इसको सुखमय कैसे मानलें। योगी कहते हैं कि सुख दुख दोनों मिथ्या हैं, परन्तु तारा ने अभी तक यह सीख नहीं पाया है कि ये दोनों मिथ्या हैं। ऐसा सीखने के लिये वह अति विकल हैं। आपने बचपन रोकर खोया है, यौवन आँसुओं में गँवाया है, सारा जीवन व्यथित हो गया है, केवल पीडा शेष रह गई है। आप कहती हैं—

जन्म से ही मनुज को झूठे जगत का प्यार भाया,
शान्ति के बदले जगत से अश्रु का उपहार पाया,
क्षणिक जीवन देख कर आली! मैं बनी उन्मादिनी-सी!

इस तरह आपकी निराशा में भी कोमलता और मधुरता है, जो हिन्दी कविता में बहुत कम पाई जाती है। तारा पाण्डे जैसी कविता लिखने वाले अधिक नहीं, केवल दो-चार कवि ही होंगे। इसमें जीवन की वह सरलता है, भाषा का वह संगीत है,

जीवन के दुख को अपना कर कहती हैं—

मैं दुख से शृगार करूँगी ।
जीवन मे जो थोडा सुख है,
मृग-जल है, उसमें भी दुख है,
छली गई बहु बार जगत में
फिर क्यो अपनी हार करूँगी ?
मैं दुख से शृगार करूँगी ।

तारा पाण्डे दुख से घबराती नहीं । इसको वे अपने जीवन का साथी समझती हैं । सुख और दुख जीवन में क्रम से आते रहते हैं । मनुष्य सुख को अपनाता है और दुख से दूर भागता है । परन्तु तारा पाण्डे ने जीवन के सार को इस तरह अनुभव किया है कि सुख-दुख बराबर हैं—

सुख दुख दोनों ही आवेंगे,
क्रम क्रम से छवि दिखलावेंगे ।
इस भिक्षुक जग को सुख देकर,
दुख के सुख को प्यार करूँगी ।
मैं दुख से शृगार करूँगी ।

आपने जीवन में इतनी पीडा अनुभव की है कि आपके लिये हँसना कठिन हो गया है । जीवन-दीपक के बुझ जाने से उत्साह नहीं रहा, चाह नहीं रही, आशा भी नहीं रही । खा-पीकर सो जाते हैं । प्रात उठकर थोडा सा काम भी कर लेते हैं और फिर वही क्रम । तारा की दृष्टि मे जीवन का

इतिहास एक पंक्ति में बन्द हो सकता है। मनुष्य पैदा हुआ, उसने दुख भोगा और वह मर गया। यदि यही जीवन का इतिहास है तो वह किस हृदय से हँसे ? आप कहती हैं—

कैसे हँसू, बतादो ना !
जीवन में उत्साह नहीं है,
परिचित सुख की राह नहीं है,
जी भर हँसू, चाहती जी से,
कोई युक्ति बता दो ना !

आगे चल कर लिखती हैं, यदि जीवन दुखमय है तो इसको सुखमय कैसे मानलें। योगी कहते हैं कि सुख-दुख दोनों मिथ्या हैं, परन्तु तारा ने अभी तक यह सीख नहीं पाया है कि ये दोनों मिथ्या हैं। ऐसा सीखने के लिये वह अति विकल हैं। आपने बचपन रोकर खोया है, यौवन आँसुओं में गँवाया है, सारा जीवन व्यथित हो गया है, केवल पीड़ा शेष रह गई है। आप कहती हैं—

जन्म से ही मनुज को झूठे जगत का प्यार भाया,
शान्ति के बदले जगत से अश्रु का उपहार पाया,
क्षणिक जीवन देख कर अली ! मैं बनी उन्मादिनी-सी !

इस तरह आपकी निराशा में भी कोमलता और मधुरता है, जो हिन्दी कविता में बहुत कम पाई जाती है। तारा पाण्डे जैसी कविता लिखने वाले अधिक नहीं, केवल दो-चार कवि ही होंगे। इसमें जीवन की ... लता है. भाषा का वह ...

जीवन की वह वेदना है, हृदय की वह व्यथा है जो केवल या तो बङ्गला कविता में मिलती है या पश्चिमीय कविता में या मीरा में। आप निराशा के अंधकार में कभी-कभी आशा की किरण को भी देख पाती हैं। परन्तु यह किरण इतनी मन्द है कि निकल कर मिट जाती है। इसका उदाहरण नीचे दिये पदों में हैं—

मैंने सोचा था,—हू जग से
शीघ्र बिदा होने वाली।
हँसना मेरा नहीं जगत मे
मैं तो हू रोने वाली।

चारों ओर घिरे थे, मेरे
अन्धकार के बादल घोर,
नहीं सूझना था तब कुछ भी
आशा अभिलाषा का छोर

मैं निराशा थी इस जीवन से
सूना था मेरा ससार,
निकल रही थी भग्न हृदय से
अस्फुट और करुण झकार।

हाथ जोड़ निज अन्तरतम से
मैंने विनती की बहुवार
हे प्रभु! मुझे बचाओ दुख से
अथवा करो जगत के पार!

अपने उस अशान्त जीवन में
मुझको फिर से शान्ति मिली,
कण-कण के सूनेपन में ही
मुखरित स्वर्गिक कान्ति मिली।

बादल हटे, प्रकाश हुआ कुछ,
अधकार भी दूर हुआ,
आशा औ' अभिलाषाओं से,
सूना-घर भरपूर हुआ।

हँसना रोना दोनों मेरे,
मैं सुख-दुख की मतवाली,
जग मे रहकर भी हूँ जग से
बहुत दूर रहने वाली।

इस कविता के दो भाग हैं, पहले भाग मे अन्धकार हैं, दूसरे में प्रकाश है। पहले में निराशा है और दूसरे में आशा। परन्तु इस प्रकार की कवितायें, जिनमें आशा के भाव हों, बहुत कम हैं। इस लिये तारा पाण्डे को निराशावाद की एक प्रमुख कवियित्री मानना पड़ता है। जिनकी कविता में सागर की गम्भीरता है, सरिता का प्रवाह है, काले बादलों का अन्धकार है। आप जीवन के पथ पर वेदना का भार उठाकर चलती हैं। मृत्यु के सिवाय न विश्राम है, न ठिकाना। कभी कभी जीवन के आदर्श की झलक दीख पड़ती है, परन्तु वह शीघ्र मिट जाती है।

रामेश्वरीदेवी 'चकोरी'

इसी प्रकार के भावों को प्रकट करने वाली स्वर्गीया रामेश्वरी देवी 'चकोरी' भी थीं। यदि आपकी छोटी आयु में ही मृत्यु न हो जाती, तो आपकी प्रतिभा का विकास होने की इतनी आशा थी कि सम्भव है आप हिन्दी के कविता-क्षेत्र में एक विशेष स्थान पा लेतीं। आपके भावों में वह सरलता है, भाषा में वह लय है जो हिन्दी कविता को गौरव देती है। "किंजल्क" आपकी कविताओं का सग्रह है। इसमें 'एक घुँट', कविता बहुत उत्कृष्ट है। इसमें भावों का इतना वेग है और भाषा का इतना प्रभाव है कि पढते-पढते पाठक इसके साथ बह जाता है।

'चकोरी' सागर के किनारे अपने आपको पाती है और वहाँ पर एक महा कलरव सुनती है। इस ससार में उसको कोई आश्रय देने वाला नहीं, बादल गरजते हैं। समुद्र की तरगें बढती हैं। बिजली आशा का चिराग लिये चमकती है और फिर बुझ जाती है। एक भीषण अट्टहास होता है। कवियित्री सागर की तरल तरगों को पकडना चाहती है, परन्तु वह भी हाथ से निकल जाती हैं। इसके बाद सागर की लहरें शान्त होती हैं। अरुण मुसकराता है, लहरें प्रलय का गान गाती हैं। जीवन की आशा मिट जाती है और अन्त में वह जीवन से इतना निराश हो जाती है कि सारे ससार के लिये प्रलय चाहती है। इसी तरह "प्रतिरोध" मे वह सुखों को एक स्वप्नों का ससार मानती है। ये स्वप्न शीघ्र मिट जाते हैं। अन्त मे वह सरिता

वाद है। आधुनिक काल अन्धकारमय है, समाज की स्थिति शोचनीय है, जिसमे जीवन का विकास कठिन-सा हो गया है। जब चारों ओर दुख के बादल हैं तो असहाय मनुष्य इन भावो को प्रकट करने के सिवाय और कर ही क्या सकते हैं। समाज के विधान और नियमो को एक लेखक ने मशीन से उपमा दी है, जिसमे अनेको मनुष्य पिस जाते हैं, परन्तु यह मशीन चलती रहती है। आधुनिक युग भी मशीन युग है। इस लिये यह उपमा और भी अधिक घटती है।

भगवतीचरण वर्मा

इस निराशा-युग के भगवतीचरण वर्मा प्रमुख कवि हैं। आपकी कविता जीवन की वेदना से भरी हुई है। निराशावाद आपकी कविता की विशेषता है। कभी-कभी कवि नास्तिक बन जाता है और अपने जीवन की कसक-कहानी को सुनाता है। यद्यपि आप सुख को माया समझते हैं तो भी आपका यह विचार है कि दुख में भी कोई सार नहीं। एक स्थान पर वह लिखते हैं, "मैं समझता हू कि जीवन एक गति है और इसलिये ससार मे कोई चीज स्थायी नहीं है। हर एक भावना बनती और बिगडती है। फिर बनना और बिगडना ससार की गति है, यही उसका नियम है। गति ही जीवन है। असफलता जीवन का प्रधान अग है।" इस गति को नीचे दिये पद मे प्रकट करते हैं—

जीवन और मरण का अभिनय होता है प्रति काल,
और यहाँ के प्रति कण में है परिवर्तन की चाल।

फिर भी यही शून्य है, उसमें वह अस्तित्व विशाल,
इन्द्रजाल-सा बिछा हुआ है किस माया का जाल।

कवि निराशा के भावों में बिल्कुल बह नहीं जाते, किन्तु उन पर विजय पाने का यत्न करते हैं। प्रयास में कभी कभी सफल भी हो जाते हैं। जब आशा और निराशा को, सुख और दुख को, एक बराबर समझते हैं तब दुख पर विजय ही पाते हैं। आप कहते हैं कि संसार में दोनों प्रकार के मनुष्य हैं। एक रोकर जग को सपना बतलाते हैं, परन्तु यह भी मन का छल है। दूसरे हँसकर जीवन को सुखमय कहते हैं, यह भी मन की भ्रान्ति है। वास्तव में सबल काल का चक्र घूमता रहता है। मनुष्य का हृदय उसके आगे निर्बल है। ममता में पड़कर कभी सुख अनुभव करता है, कभी दुख। जब संसार को अपने हृदय के अनुकूल पाता है, तो उसको सुखमय समझता है। जब उसको प्रतिकूल पाता है, तो वही सुख दुख में बदल जाता है। कवि बार-बार योगियों की तरह सुख दुख दोनों पर विजय पाने की चेष्टा करता है, परन्तु इस प्रयास में जो दुख होता है, उसको भूल नहीं सकता —

एक-एक के बाद दूसरी, तृप्ति प्रलय पर्यन्त नहीं,
अभिलाषा के इस जीवन का आदि नहीं है, अन्त नहीं।
यहाँ सफलता असफलता के बन्धन का अभिशाप नहीं,
यहाँ निराशा औ आशा का पतझड़ नहीं, बसन्त नहीं।
जो पूरी हो सके कभी भी, ऐसी मेरी चाह नहीं,
यहाँ महत्वाकांक्षाओं की परिधि नहीं है, थाह नहीं।

क्या भविष्य है? नहीं जानता, मुझको ज्ञात अतीत नहीं,
सुख से मुझको प्रीति नहीं है, दुख से मैं भयभीत नहीं।
लड़ता ही रहता हूँ प्रति पल, बाधाओं का पार नहीं,
काल-चक्र के महासमर में हार नहीं है, जीत नहीं।

वर्मा जी के निराशावादी भावों का आधार ज्ञान है। आपकी कविता में विचारों की मात्रा अधिक है। आप तारा पाण्डे, चकोरी और हृदयेश की तरह वेदना को ही प्रकट नहीं करते, परन्तु वेदना के कारण को समझने की चेष्टा करते हैं। जब किसी वस्तु के कारण को पाने का यत्न किया जाय, तो उसमें ज्ञान का अंश अवश्य आ जाता है। जीवन के विषाद को प्रकट करना एक बात है, परन्तु विषाद क्यों है, इसका स्वभाव क्या है, इसको वर्णन करना भिन्न बात है। कविता लिखते समय आप के सामने जीवन के अनेक चित्र आते हैं। उन पर आप विचार करते हैं। विचार करने का परिणाम यह होता है कि वे भावों में बह नहीं जाते, परन्तु इनके ऊपर उठ जाते हैं। इस लिये आप कहते हैं कि इस अभिलाषा के जीवन का कोई आदि नहीं है, कोई अन्त नहीं है। न ही निराशा की पतझड़ है और न ही आशा का बसंत है, न भविष्य का ज्ञान है, न अतीत की याद है, न सुख से प्रीति है, न दुख से भय है, काल-चक्र के महासमर में न हार है न जीत है। जीवन एक संग्राम है। एक गति है। यद्यपि जीवन में निराशा है, बाधा है पर उससे युद्ध करना मनुष्य का आदर्श है। यही उनकी कविता का सन्देश है।

लिरिक कविता

आधुनिक निराशावादी सभी कवि एक नये ढग पर कविता करते हैं। इन पर अङ्गरेजी और बगला की कविता का काफ़ी प्रभाव पडा है। इस लिये इन्होंने नई शैली को प्रचलित किया है। इस प्रकार की शैली को अङ्गरेजी मे 'लिरिक' के नाम से पुकारा जाता है। 'लिरिक' में तीन प्रधान बातें होती हैं। एक तो कवि अपने भावों को प्रकट करता है। यह 'लिरिक' का सबसे पहला अङ्ग है। दूसरे लिरिक सक्षिप्त होता है। इसलिए कवि अपने एक भाव को प्रकट करता है वह अधिक लम्बी कविता नहीं करता, यदि लम्बी कविता करेगा तो केवल अपने एक भाव को नहीं प्रकट करेगा। बल्कि उसमें व भाव भी आ जायेंगे जो उस के पहले भावों से गहरा सम्बन्ध नहीं रखते। एक भाव की जगह अनेक भाव हो जायेंगे, जिससे वह 'लिरिक' के आदर्श से गिर जायगी। 'लिरिक' का तीसरा अङ्ग सगीत है। यहाँ सगीत का प्रयोजन लय से है। जब 'लिरिक' कविता का आरम्भ हुआ था, तब 'लिरिक' गाये जाते थे। आज कल इनका गाया जाना आवश्यक नहीं है, परन्तु इन म लय का होना आवश्यक है। इससे सार यह है कि 'लिरिक' कविता लिखते समय कवि को प्रवाह का ध्यान रखना पडता है। ये तीनों अङ्ग आधुनिक निराशा की कविता में पाये जाते हैं। इस कविता मे कवि अपने भावों को प्रकट करते हैं। कवितायें लम्बी नहीं हैं, सक्षिप्त हैं और इन में लय और प्रवाह है। इस प्रकार की कविता

करने वाले और भी कई कवि हैं जिन में श्री बच्चन, श्री रामकुमार वर्मा, श्री अज्ञेय, श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी', और श्रीमती महादेवी वर्मा, प्रमुख हैं । इस प्रकार की कविता आधुनिक युग में और भी अधिक लिखी जायगी। अभी तक तो ससार में आशा की रेखा नहीं दीख पडती ।

॥ बस ॥

हिन्दी भूषण परीक्षा की सहायक पुस्तकें

भारतवर्ष के इतिहास की प्रश्नोत्तरी

(दूसरा भाग)

[ले०—प्रो० सोमदत्त सूद, अध्यापक कन्या-महाविद्यालय, जालन्धर]

इस पुस्तक में प्रो० वेदव्यास और प्रो० गुलशनराय के भारतवर्ष के इतिहास के आधार पर वास्कोडिगामा के भारत-प्रवेश से लेकर आज तक का भारतवर्ष का इतिहास प्रश्न और उत्तर के रूप में दिया गया है। मूल्य ।=)

हिन्दी साहित्य के इतिहास की प्रश्नोत्तरी

(ले०—श्री गोपाल शरण श्याम)

इस पुस्तक में हिन्दी साहित्य का सारा इतिहास प्रश्न और उत्तर के रूप में समझाया गया है। परीक्षा में पूछे जाने वाले प्राय सभी प्रश्न इसमें आ गये हैं।

भारतवर्ष के इतिहास का चार्ट (वर्तमान युग)

इसमें भारत का वर्तमान युग का इतिहास दिया गया है। मूल्य ≡)

हिन्दी भवन, अनारकली, लाहौर